ॐ

हिन्दुत्वम्

स्वामी वेदानन्द
भारत सेवाश्रम संघ

ॐ

हिन्दुत्वम्

समग्र हिन्दु समाज के नरनारियों के लिए
निर्दृष्ट वैदिक उपासना-पद्धति एवं सदाचार-विधि

जातिसंगठक एवं समाजसंस्कारक

आचार्य श्रीमत् स्वामी प्रणवानन्दजी

द्वारा आदिष्ट एवं अनुमोदित

स्वामी वेदानन्द

भारत सेवाश्रम संघ

२११, रासविहारी एवेन्यू

बालीगंज, कोलकता-१९

प्रकाशक :-
स्वामी सारस्वतानन्द
भारत सेवाश्रम संघ
२११, रासविहारी एवेन्यू
कोलकाता-१९

शुभ महालया १४१४
चतुर्थ संस्करण
मुद्रण संख्या-५०००

मूल्य-छ रूपये

मुद्राकर :-
रबीन्द्रनाथ सरकार
सेञ्चुरी प्रेस
२१, पटुयाटोला लेन
कलकाता-७०० ००९



युगाचार्य्य स्वामी प्रणबानन्दजी महाराज

प्रतिष्ठाता-भारत सेवाश्रम संघ

"औं हिन्दुत्वम्"
हिन्दु जातिका पुनरूत्थान

यदा यदा हि धर्म्मस्य ग्लानिर्भवति भारत
अभ्युत्थानम् अधर्म्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।। गीता ४/७
परित्राणाय साधुनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।। गीता-४/८

युग युगमें धर्म संस्थापनके लिय जो शुद्ध सत्त्व मानवशरीरमें आचार्यके रूपमें अवतरित होते हैं, उन्हींके पाँचजन्य निर्घोषसें आज हजार वर्षोंकी नींद ताड़कर जड़ता क्लीवता-दुर्वलता, निराशा-अवसांदके कठिन आवरणको चूर्ण-विचूर्ण करते हुये हिन्दुजाति आज फिर प्रगति-अभ्युदय-ऋद्धि सिद्धिके मार्गपर यात्रा करने में दृढ़संकल्प हैं। अलौकिक तप:शक्तियुक्त सिद्धसंकल्प युगाचार्य स्वयम् नेता व मार्गदर्शक हैं—हिन्दुके नव जागरण के इस यौवन-जलतंरग रूकनेवाला है कौन?

हिन्दु-समाज-समन्वय आन्दोलन

युगाचार्यकी अंगुली के संकेतसे इस आन्दोलनके विराट तरंगोच्छवास आज सारे भारत व भारतके बाहर तेज दौड़े हैं—नगर-नगरमें, जनपदसे जनपदमें, पर्वतके कंदरमें, मुहल्ले मुहल्ले में-जहाँ जो हिन्दु है, उच्चतम शिक्षित सदाचारीसे अनुन्नत अशिक्षित, अवहेलित, उपेक्षित-आज इस आंदोलन सभीको करूणामय युगाचार्यके स्नेहशीतल वक्षपर खीच रहा है। आचार्यको महाभावसे अनुप्राणित, महादर्शसे शिक्षित सर्वत्यागी सन्न्यासियों दलके साथ हिन्दुजातिके इस महाजागरणकी वाणी लेकर अथक श्रमसे सम्पूर्ण भारत तथा बर्हिभारतमें परिभ्रमण कर रहे हैं।

---

* "हिन्दु" शब्द वेदादि शास्त्रानुमोदित नहीं है। पर काल के क्रमके साथ हिन्दु शब्दके द्वारा आज हमारे धर्म, समाज, शास्त्रादि समझा जाता है। इसलिये हम "हिन्दु" शब्द प्रयोग करते हैं। हिन्दु कौन है? वैदिक संस्कृति व वैदिक आदर्श माननेवाले ही हिन्दु है।

देशमें सर्वत्र इस आन्दोलनके केन्द्रके रूपमें अगणित हिन्दुमिलन मन्दिर स्थापनपूर्वक हिन्दु जनताको सम्मिलित व संघबद्ध करने हुये हिन्दुसमाजके कल्याणकर चिंता व प्रचेष्टामें नियोजित किया जा रहा है। मिलन-मन्दिरमें उन्नत व शिक्षित हिन्दुओं अनुन्नत अवहेलित हिन्दुओंसे मातृभावमें प्रेम-प्रीतिके साथ एकत्रित होकर हिन्दुजातिके कल्याणमें सचेष्ट हैं। इस मिलन मन्दिरमें सभीश्रेणीके हिन्दुओंके अबाध अधिकार है। यहाँ भेद-विषमताका प्रश्न नहीं, उन्नत-अनुन्नत की पृथकता नहीं, शिक्षित-अशिक्षित की विभिन्नता नहीं, स्पृश्यास्पृश्यताकी संकीर्ण बुद्धिका आश्रय नहीं, है परस्पर स्नेह-श्रद्धा, प्रेम-प्रीति, सख्यता-सहयोगिता, सहानुभूति-समवेदना। और है संघबद्धता-सभीश्रेणीके हिन्दुके एकसाथ, एक ही उद्देश्यमें, एक ही आदर्शसे अनुप्राणित होकर हिन्दुसमाजके मंगलमें एकमन-प्राण पूर्वक संघबद्ध होना है। इस मिलन मंदिरके अनुष्ठानकी प्रचेष्टाके द्वारा ही हिन्दुसमाजके अस्पृश्यताका वर्जन, जलाचरण, धर्मान्तरित नरनारिओं को हिन्दुधर्ममें दीक्षादान व हिन्दु समाजमें पुनर्ग्रहण, धर्मान्तर-ग्रहण निवारण आदि समस्याओंके समाधानका पथ बन रहा है। युगाचार्यने स्वयम् आज सभी हिन्दुओंको बुलाकर, खोजकर अपने हाथसे सभी की कलाईमें मिलनकी राखी बाँधते हुये आश्वास व अभयवाणी सुनाकर, प्रत्येक को प्रेमालिंगन दानपर्वक एक अखंड हिन्दुजातिके गढ़नेकी सूचना की है।

युगाचार्यकी पताकाके नीचे संघबद्ध हो

उन्नति-अभ्युदयकामी हिन्दु उठों, जागो, आओ। युगाचार्यके महामिलनके व महाप्रेमकी सभुन्नत पताकाके नीचे समवेत होकर उल्लाससे विजयाभियानमे अग्रसर हो। कालस्रोत लौटे है, हिन्दुजातिके हजार वर्षोंकी आत्मविस्मृति टूट रही है, जागरणके कलोच्छवासने जातिके सारे शरीरमें पुलक स्पन्दन संचार किया है, आत्मरक्षाके आकांक्षा व संकल्प तीव्रतर हो रहे है, आत्मप्रसारण का प्रबल आग्रह समाजरूप शरीरको गतिशील बनाये है, सर्वोपरि आज सिद्धसंकल्प आचार्य महा शक्तिकी प्रेरणा लेकर तुम्हारी जातीय तरजीके कर्णधार बने है—आज मानो मत् लौट, ऐसे अण्यर्थ सोनेका मौका मत जाने दे।

हिन्दुधर्म व हिन्दुजातिका आश्रय-वेद

हिन्दुधर्ममें साधनाके अनगिनत मत व पथ है उन सबके उद्‌गम स्थल है क्या? वेद। हिन्दुधर्मके सभी मत व पथके मूल उतस है-वेद।

वेद-समधिगम्य, तपोलब्ध, आप्त, अपौरूषेय-अत:अबिसम्वादित। हिन्दु समाजमें अनगिनत श्रेणी व सम्प्रदाय विद्धामान है। कहाँ-है मिलन का सूत्र? मिलनका स्थल है वैदिक उपासना पद्धति, वैदिक संस्कार व सदाचारानुष्ठान। विशाल हिन्दुजनता असंख्य विभाग उपविभाग में बिभक्त है। मिलनकी नींव क्या है? वेदके सार्व्वजनीन, सार्व्वकालिक एवं सार्व्वभौमिक सत्यतत्त्वसमूह है।

वेद ही है हिन्दु-समाज-समन्वयका बुनियाद

हिन्दुधर्म व हिन्दुसमाजके अतीत इतिहास पर्यालेचना करने से दिखाई पड़ता है युग युगमें धर्मग्लानि निवारण पूर्वक खंडविखंड हिन्दु समाजको संहत व संघबद्ध करनेकी योजना लेकर जो कोई आचार्य अवतीर्ण हुये है, वे ही वेदको नींव के रूपमें आश्रय किये हैं। श्री भगवान् श्रीकृष्णके धर्म संस्थापन व जाति गढ़नेकी अमृतमयी वाणी है गीता-वेदान्त या उपनिषदका ही सार समन्वय है।

"सव्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दन:।"

वेदान्तोपनिषदके अद्वैतभाष्य ही आचार्य शंकरके हिन्दुधर्म संस्थापन व हिन्दुसमाज निर्माणका मूल अबलम्बन है। स्वामी विवेकानन्द के भारतीय जाति गढ़नेकी परिकल्पनाभी वेदान्तके नींवपर प्रतिष्ठित है। माधवाचार्य, निम्वार्काचार्य, बल्लभाचार्य, रामानुजाचार्य, श्रीश्रीचैतन्यदेव आदि आचार्योंके द्वारा प्रतिष्ठित सम्प्रदायके धर्ममतसमूह वेदान्तका ही विभिन्न युगोपयोगी विभिन्न व्याख्या मात्र है। राजा राममोहन राय के द्वारा प्रतिष्ठित ब्राह्मसमाज एवं स्वामी दयानन्द के द्वारा स्थापित आर्यसमाज उभय ही यथाक्रम तन्त्र व उपनिषदके ब्रह्मवाद एवं वैदिक उपासना, ज्ञान व कर्मकांडके आधारपर रचित है।

बुद्ध व महावीर के द्वारा प्रचारित बौद्धधर्म एवं जैनधर्म भी अवैदिक नहीं। वेदोका कर्मकांड अस्वीकार करनेसे भी उपासनाकाण्ड व ज्ञानकांडको कै से परित्याग किया जाय?

बहुपूर्व युगकी तरह इस युगमें भी "हिन्दु-समाज-समन्वय" के विधानकर्ता आचार्य आज उस वेदको ही समन्वयके नींवके रूपमें ग्रहण करते हुये वैदिक संस्कार,

वैदिक उपासना, वैदिक आचार अनुष्ठान पद्धतिके शिक्षादान व प्रचार पूर्वक समग्र हिन्दु जनताको संघबद्ध व अखंड हिन्दु समाजके रूपमें गढ़नेको दृढ़संकल्प है।

अवैदिक मतवाद व आचारानुष्ठान परित्याग करो

सौ सौ वर्षो तक विभिन्नप्रकारके राष्ट्रविप्लव व समाज विप्लवके बीच होकर असंख्य विजाति व विधर्मो के संस्पर्शमें आकर हिन्दुके धर्मानुष्ठान व आचार पद्धतिके मध्य बहुविध अवैदिक भाव व आदर्श प्रवेश करते हुये हिन्दु जनताकी आदत बन गयी है, फलत: उन्हीं अज्ञता व भ्रान्तिके वशमें शास्त्रानुमोदित के रूपमें हिन्दु समाजमें स्वीकृतहो रहे हैं। आज युगाचार्यके जीवनादर्श व सत्योपलब्धिके आलोकमे विचार विश्लेषणपूर्वक वह परित्याग करना होगा।

लोकाचार, देशाचार स्त्री आचारकी सीमा भूल जाओ

काल के क्रमके साथ विभिन्न बिप्लवान्दोलन व बिचित्र अवस्थामें पतित हिन्दु समाजने आत्मरक्षार्थे व्यस्त होकर विभिन्न लोकाचार, देशाचार व स्त्री आचारका सहारा लिया था। दीर्घसमयके अभ्यासके फलस्वरूप वैदिक सत्य व आदर्श, वैदिक आचारानुष्ठान भुलकर-उन्हीको ही शास्त्रका मानकर उनकी सेवामें आत्मनियोग पूर्वक हिन्दुसमाज आज असंख्य प्रकारके भेद व विषमतामें नष्ट भ्रष्ट, द्वन्द्व-विसंवाद हेतु उद्वास्तु, ईर्षा-घृणा-विद्वेष से विषैला हिन्दुत्वके समुन्नत शिखरपर खड़े होकर एक अखंड जातीयताकामी हिन्दु उक्त अवैदिक, अशास्त्रीय लोकाचार-देशाचार स्त्री आचारकी रेखा तोड़ते दुये वैदिक आदर्शके वेजयंतीतले शरण ग्रहणपूर्वक सम्मिलित संघवद्ध होकर प्रार्थना करो :—

"ओं सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सहवीर्य्यं करवावहै।"

"हमें समवेत रूपसे रक्षा करो, समवेत रूपसे पालन करो, संघबद्ध व वीर्यवान करो।"

हिन्दु मात्र ही वेदमें अधिकार है

वेदरूपी भगवान् समग्र मानवजातिको उद्देश्य करते हुये कह रहै हैं—

ययेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य:

ब्रह्म-राजन्याभ्यां शूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च।

(यजुर्व्वेद २६/२)

"लोकहितार्थे उक्त मेरी कल्याणदायिनी वाणी मैनेक्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज सभी के लिये ही प्रदानकिया है।"

अतः वेदपर सभी हिन्दुओंके अधिकार है। शिक्षा एवं क्षमता के अनुसार जो चितने वैदिक आदर्श व अनुष्ठान पालन करेंगे वे उतने ही कल्याण लाभ कर सकेंगे।

"स्वल्पमप्यस्य धर्म्मस्य त्रायते महतो भयात्"

युगके प्रयोजन सिद्धार्थे स्मृतिशास्त्र

पारिपार्शिक अवस्था व आभ्यन्तरिक प्रयोजनकी ओर दृष्टि रखकर समाज-कल्याण के लिये स्मृतिशास्त्रकी रचना हीती है; विभिन्न युगके स्मृतिशास्त्रके मध्य विभिन्नता दिखाई देती है। इसलिये मुनियोंने आदेश दिया है—"श्तुति-स्मृतिके विरोधमें श्रुतिके सिद्धान्तको ही ग्रहण करना होगा"-"श्रुति-स्मृतिविरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी।"

सौ सौ वर्ष वहले सामाजिक अवस्थाके लिये जो स्मृति व्यवस्था रचित हुयी थी आज वह वर्तमान समाजके हिनसाधनमें यथेष्ट नहीं, हिन्दुके पुनरूस्थानके नयेयुगमें नये स्मृतिशास्त्रकी जरूरत अनुभूत हो रहा है। पुराने स्मृतिशास्त्रके मोहमें मुग्ध होकर वैदिक आदर्श व अनुष्ठान ग्रहणमें पीछे हटनेसे हिन्दुके कल्याण सुदूरपराहत है।

गुणकर्मानुसार वर्णविभाग ही-वेदानुमोदित

चातुर्व्वर्ण्यं मया सृष्टं-कर्म्मविभागशः-गुण व कर्मानुसार चतुर्व्वर्णविभाग सृष्ट हुआ है। किंतु एक समय जो असभ्य कदाचारी, अशिक्षित रहने हेतु गुण एवं कर्मानुसार शूद्र के नामसे अभिहित हुये थे, आज शत शत वर्षोंके बाद सुसंस्कृत, शिक्षित, सदाचारी-उच्चतम गुण व कर्मके अधिकारी होकर भी-वे क्यों शूद्र के नामसे परिचित होगा? पक्षान्तरमें जो गुण व कर्म खोकर द्विजातियोमें ऐसे व्यक्तियों शूद्र या पंचमके वर्गमें क्यो न माने जायेंगे?

वैदिक आदर्श ग्रहण करो

उन्नत व अनुन्नत सभी हिन्तुको वैदिक आदर्श व अनुष्ठान पद्धति ग्रहणपूर्वक निज निज साधना व शक्तिके अनुसार गुण एव कर्मके अधिकार अर्जन करनेको

प्रयत्न करना होगा, तब जाकर वंश-कांचन-पद-वर्ण की कुलीनता आदि भेद-विषमताका भाव अन्तर्हित होकर स्वाभाविक समन्वयकी स्थिति लौट आयेगी; हिंसा-घृणा-ईर्षाद्वेष विलुप्त होंगे; मिलन सख्यता, एकता प्रतिष्ठित होकर समाजमें संघशक्तिका उद्‌भव होगा।

धर्म ही जाति व समाजका मेरूदण्ड

हिन्दु समाज व जाति ब्रह्मज्ञ ऋषिके उपलब्ध सत्यतन्त्व व धर्मकी साधनाके नींवपर आधारित है। अत: धर्म ही हिन्दुसमाज व जातिकी प्राणशक्ति व जीवनका अबलम्बन है। यही स्वधर्म रक्षा का संकल्प ही हिन्दुत्वका मूलमन्त्र है। समाज समन्वय व जातिनिर्माणके लिये हिन्दुको आज अपने धर्मपर प्रतिष्ठित होना है। समाजमें समन्वय व समता एवं जातीय जीवनमें एकता व एकतानता लानेके लिये धर्मसाधनामें संघबद्ध समप्राण होना प्रथम एवं प्रधान आवश्यक है।

प्रत्येक हिन्दुको उपासना परायण होना होगा

भगवानको केन्द्ररूप मानकर धर्मको अबलम्बनपूर्वक जिस हिन्दुके वैयक्तिक,सामाजिक व जातीय जीवन गठित व आबहमन कालतक परिचालित, वही हिन्दु आज भगवदुपासना व धर्मसाधनामें उदासीन व अवहेलापरायण बने हैं। क्यों न हिन्दु अध:पतित होगा? किस मार्गपर हिन्दुकी उन्नति व समृद्धि आयेगी? मुसलमान के लिये जैसे समाज, ईसाई के लिये जैसे प्रार्थना वैसे संध्यावन्दना हिन्दुकी सार्वजनीन जातीय उपासना पद्धति है। वही संध्यावन्दनारूप जातीय उपासना पद्धति हिन्दुने आज विसर्जन दिया है, इसलिये जातिके रूपमें हिन्दुका अस्तित्व भी विलुप्तप्राय है। गिनतीमें करोड़ों वर्तमान रहनेपर भी हिन्दुविपदापद, अत्याचार, उत्पीड़न, आघात-आक्रमणके सामने क्षीणप्राय, हीन, दुर्वल तथा नगण्य है।

हिन्दुको अगर हिन्दु होकर वचना है, हिन्दुसमाजमें अगर अपना अपना आदर्श व विशेषता लेकर टिकना पड़ता है, विराट हिन्दु-जनसमूहको यदि पुन: शक्तिमान अखंड महाजातिके रूपमें निर्माण करना है तो प्रत्येक हिन्दुको आब्राह्मण आबालवृद्ध हिन्दु नरनारीको-वैयक्तिक व सामाजिक जीवन में उपासनापरायण होनाहोगा-प्रत्येक हिन्दुको संध्या वन्दनाके अनुष्ठानमें मनोयोगी, नियमित व अविचलित होना होगा।

हिन्दु मिलन-मन्दिरकी वैदिक संध्यावन्दना

हिन्दु समाज-समन्वय आन्दोलनके स्वरूप देशमें सर्वत्रप्रतिष्ठित असंख्य मिलन-मन्दिरके द्वारा ही सम्मिलित सर्वश्रेणीके हिन्दु नरनारीको हिन्दुकी सार्वजनीन वैदिक उपासना पद्धति-संध्यावन्दना शिक्षा देनेकी व्यवस्था हो रही है।

हिन्दुमात्र ही संध्यावन्दनामें अधिकार है

वैदिक संध्यापद्धतिमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, पुरूष स्त्री सभीश्रेणीके हिन्दुके समान अधिकार है। प्रत्येक हिन्दुको यही संध्यावन्दना करना होगा अन्न जल के बिना जैसे मानव शरीरकी रक्षा नहीं हो सकती, संध्यावन्दनारूप भगवदुपासना न करनेसे हिन्दुके धर्मजीवन एवं समाज जीवन नहीं बचेंगे। युगाचार्यके आदेश-निर्देशसे इसलिये सभी श्रेणीके हिन्दुको संध्यावन्दनामें अधिकार दानपूर्वक उपयुक्त शिक्षादानकी व्यवस्था हो रही है। वर्तमानमें प्रचलित हिन्दुकी संध्या उपासना पद्धति वृहत व जटिल है। हिन्दुजनताके लिये उसका अनुष्ठान हिन्दुके लिये सहज व सरल संध्यावन्दनाकी पद्धति शिक्षा सम्पर्कमें कतिपय बातें स्मरण रखना होगा—

१) प्रचलित धारणा यही कि वेदपर स्त्री व शूद्रका अधिकार नहीं है। अत: वैदिक संध्यावन्दना करना उनके लिये अनुचित है। ऐसी धारणा सम्पूर्ण मिथ्या व अयौक्तिक है। हिन्दुमात्र ही वेद एवं वैदिक संध्या वन्दनामें अधिकार है। वरना यही संध्यावन्दना न करनेसे ही हिन्दु पतित होते है व हो रहे हैं। शिक्षा के द्वारा ही अधिकार लाभ होता है। मिलन मन्दिरके द्वारा ही हिन्दुको सन्ध्या उपासना पद्धति शिक्षा दिया जा रहा है। वेदमन्त्र दर्शन व प्रकाश जिन्होंने किया है, उनमेंसे अनेक शूद्र व महिला ऋषि हैं।

२) प्रचलित धारणा है कि जिनके उपनयन नहीं हुये या नहीं होते हैं एव जो दीक्षित नहीं है, संध्यावन्दना में उनके अधिकार नहीं है। ऐसी धारणा भी सम्पूर्ण मिथ्या है। हिन्दुमात्र ही अवगत होना जरूरी है कि उपनयन-दीक्षा हो या न हो संध्यावन्दनामें कोई वाधा नहीं। हरिनाम संकीर्तन की तरह संध्यावन्दनारूप भगवानकी उपासना सदैव सर्वत्र कर्तव्य है। बालक,

युवक-वृद्ध, स्त्री-पुरूष सभीको ही यही संध्यावन्दना अवश्य करना होगा।

३) आचार्यके निकट उपनयन संस्कार लेकर जिन्होंने संध्यापद्धति शिक्षाकीहै वे उसप्रकार के अनुष्ठान करेंगे। गुरूके निकट जो दीक्षित हैं। वे पहले यही संध्यावन्दना समाप्त कर गुरूप्रदत्त प्रक्रियाके अनुष्ठान व मन्त्रादिका जप करेंगे। उपनयन या दीक्षा जिनके नहीं हुये वे भी इस संक्षिप्त संध्या पद्धति सीखकर सुबह एवं शामको उसका अभ्यास करेंगे।

४) प्रचलित धारणाहै कि शूद्रादिके लिये ''ओँ'' उच्चारण करना अनुचित है। ऐसी धारणा सम्पूर्ण मिथ्या है। ''ओँ'' शब्दब्रह्म। क्षुद्र सरसेकी तरह दानेसे जैसे विराट पीपल के वृक्षकी उतपत्ति होती है, वैसे ''ओँ'' शब्दंसे सारे शब्दकी उत्पत्ति है। अ + उ + म् = ओँ। अ = अज = ब्रह्मा = सृष्टिकर्त्ता। उ = उपेन्द्र = विष्णु = पालनकर्ता, म् = महेश्वर = संहारकर्ता। यही ओँकारके ध्यान व जप एवं उपासना करनेसे ब्रह्मा विष्णु व शिवकी समष्टि परमेश्वरकी उपासना होती है। ''ओँ'' शब्द उच्चारणके समय नाभिदेशसे ओष्टाग्र तक सारेशब्दोच्चारणके स्थानस्पर्शपूर्वक उच्चारित होता है। इसलिये ही ''ओँ'' निखिल शब्दसमूहकी जननी हैं ''ओँ'' कारसे वेदमाता गायत्री एवं गायत्री से वेदकी उत्पत्ति है-जैसे दानेसे अकुर, अंकुरसे वृक्ष। अतः ''ओँ'' शब्द ही भगवानके सर्वश्रेष्ठ नाम है। ''हरिनाम'' करनेमें जैसे किसीकी वाधा नहीं, वैसे ''ओँ'' उच्चारण करनेमें किसीको मना नहीं है। प्रत्येक वेदमन्त्रकी आदिमें ''ओँ'' कार उच्चारणकी व्यवस्था है।

(५) यही संध्यावन्दना जैसे अकेला किया जाय वैसे समवेत रूपसे अनुष्ठित ही सकता है। मुसलमान या ईसाई एवं हिन्दुओंमें आर्यसमाजी या सिक्खों जैसे एकत्रित उपासना करते हैं, साधारण हिन्दुसमाज में भीवैसे समवेत उपासनापद्धति चालु करना होगा समवेत उपासनाके द्वारा ही हिन्दुसमाजमें संघशक्ति लौट आयेगी। वैदिक युगमें व उसके बादके युगमें भी यही समवेत उपासना पद्धति रहनेके कारण ही हिन्दुसमाजमें संहति थी।

६) इसलिये प्रत्येक परिवारमें एक देव-गृह रखना होगा, वहाँ परिवारके सदस्योंकोसुबह व शाम एकत्रित होकर उपासना करना होगा। कोई एक मन्त्रादि पढ़कर अनुष्ठासमूह करते रहेंगे। बादमें अवशिष्ट सदस्यगण उन मन्त्रोंको उच्चारणपूर्वक कार्यसमूह सम्पन्न करेंगे। जिनके अपने मन्दिरया देव गृह नहीं है वे पड़ोसमें किसीके देवगृह या कोई साधारण धर्मस्थान जाकर उपासना व संध्यावन्दना करेंगे। घर संलग्न अंगनमें तुलसी-वृक्षके नीचे बैठकर भी किया जा सकता है।

आचारप्रभवो धर्मः

धर्मकी प्रतिष्ठा है सदाचारके ऊपर। अतः सन्ध्यावन्दनादि भगवत् उपासना करनेको आचारणशील होना आवश्यक है। सदाचारके नामपर आजकल समाजमें जो लोकाचार-देशाचार-स्त्री आचारके छुआ छूत प्रचलित उनमेंसे अत्याचार व अनाचार छोड़ शुद्ध सदाचार बहुत ही कम है। अतः विचारपूर्वक उनमेंसे जो अनावश्यक व क्षतिकर उन्हें वर्जन करना होगा। वास्तविक सदाचार किसे कहा जाय? ऋषि द्वारा उक्त वैदिक आचारपद्धति ही सदाचार है एवं वही सदाचार ही धर्मसाधना एवं भगवत् उपासनाकी नींव है। आचारहीन या कदाचारी व्यक्तिके सभी अनुष्ठान ही निष्फल है।

आचार-शिक्षा व सभ्यताका अंग

आचरणशील व्यक्ति ही भद्र, सभ्य व शिष्टके रूपमें गण्य होते है। आचरणही न शिक्षित एवं सम्भ्रान्त व्यक्ति समाजमें निन्दित व घृणित है। तथाकथित अनुन्नत हिन्दुओंमें जो शिक्षित व आचरणशील उनसे उच्चवर्गके शिक्षित व्यक्तियों समान भावमें मिलनेमें, खान-पानमें द्विधा का अनुभव नहीं करते हैं।

आचार तीन प्रकारके हैं—शारीरिक, मानसिक व वाचनिक। तन-मन व वचनको पवित्र रखनेके लिये ये त्रिविध आचारकी उत्पत्ति हुयी है।

उच्चश्रेणीके हिन्दुओंमें अनेक अनाचार, अत्याचार व कदाचार हैं। अनुन्नत हिन्दुओंमें भी अनाचार, कदाचार काफी है। आज हिन्दुधर्मके पुनर्जागरण,

हिन्दुसमाजके पुनर्निर्माण एवं हिन्दुजातिके पुनरभ्युदयके दिनमेंजटिल आचारमार्ग परिहार करते हुये सहज, सरल सयुक्ति वेदानुमोदित सदाचारमार्ग आश्रय करना होगा।

हिन्दुका कल्याण-उपासना व सदाचारमें

उपासनानिष्ठ व सदाचारपरायण होनेसे ही हिन्दुसमाज व जातिके सर्वांगीन मंगल सुनिश्चित है। सन्ध्या उपासना व सदाचार के द्वारा हिन्दुओंके—

(१) शरीर नीरोग व दीर्घायुः होगा (२) मन पवित्र व स्थिर होगा। (३) वाक्य हितकर व सत्य होगा (४) व्यवहार शिष्ट व प्रीतिपूर्ण होगा। (५) अलसता, विलासिता व कर्मविभुखता दूर होंगी। दैनन्दिन जीवन सुश्रृंखल व सुनियन्त्रित होगा। (६) कर्तव्य व दायित्व पालनके सामर्थ जाग्रत होगा (७) हिन्दुत्वबोध एवं समग्र हिन्दुजातिके प्रति ममत्व का बोध जाग्रत होगा (८) ऋषि, गुरू, शास्त्र, महापुरूष, मन्दिर, मन्त्र, देवता तीर्थादिमें विश्वास व भक्ति आयेंगे। (९) पूर्वपुरूषोंके प्रति हिन्दुके मनमें श्रद्धा व गौरव जाग्रत होंगे। (१०) हिन्दुसमाजमें विभिन्न श्रेणियोंके मध्य हिंसा-द्वेष-घृणा-संकीर्णता-स्वार्थका भाव दूर होकर मित्रता-सहानुभूति आयेंगी(११) हिन्दुके आत्मसम्मानबोध एवं आत्मरक्षार्थे उदयोग आयेंगे। (१२) हिन्दुसमाजमें संधबद्धता प्रतिष्ठित होगी।

"धर्म्मोऽस्य मूलान्यसवः प्रकाण्डो वित्तानि शाखाश्छदनानि कामाः।।
यशांसि पुष्पाणि फलंच पूण्यं असौ सदाचार-तरूर्महीयान्।।

सदाचारको एक वृक्षके साथ तुलना किया जाय। इस सदाचार वृक्षकी जड है-धर्म। आयु-इसका कांड; धनसम्पद-इसकी शाखा; यश-इसका पुष्प; कामना-इसके पत्र-पल्लव, पुण्य-इसके फल, अर्थात सदाचार परायण व्यक्तिके जीवनमें उक्त सभी सुलभ हैं।

हिन्दुके समग्र जीवन ही भगवानके चरणोंपर अर्पित

उपसंहारमें वक्तव्य जगतकी अन्यान्य जातिकी तरह हिन्दुजातिने धर्म एवं भगवानको जीवनके एक निर्दिष्ट कोणमें सीमाबद्ध कर नहीं रक्खा था, एक निर्दिष्ट

समयमें भगवान व धर्मसे लेन-देन मिटाकर दैनन्दिन जीवनके अन्यान्य सारे कर्ममें स्वयम् कर्ता व भोक्ता होकर नहीं बैठती। हिन्दुके ऋषिने हिन्दुको सिखाये थे

प्रातरूत्थाय सायाह्नं सायाह्नांत् प्रातरन्ततः।
यत् करोमि जगन्मातस्तदेव तवा पूजनम्।।

सुबहसे शाम एवं शामसे सुबह तक जो कुछ हम करे सभी जगज्जननीकी सेवा व पूजा है।

"यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत् कूरूष्व मदर्पणम्।।" गीता ९/२७

जो कुछ करो, जो कुछ खाओ पीओ, जिस यज्ञादिका आयोजन करो, जो दान करो, जप-तप-उपासना जो कुछ करो, सभी भगवान की तुष्टि-तृप्तिके लिये भगवानके उद्दश्यमें समर्पण करो।

इस तरह हिन्दुके व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक जीवन एकसमय भगवानको केन्द्र कर बना था। इस तरह हिन्दुके जीवनमें प्रत्येक तुच्छ विषय भगवानके चरणोंमें निवेदित होकर धर्म बना था।

भाग्यके परिहाससे हिन्दु आज वही भाव, आदर्श भूल गये हैं। सौ में प्रायः ९५ जन हिन्दुने तो भगवानके उपासना व नामपरित्याग किया है, अवशिष्ट हिन्दुओं सोचते है जिस समय तक देवताकी पूजा या हरिनाम कीर्त्तनादि होते हैं उस समय तक ही भगवान् व धर्मसे सम्पर्क है। जीवनके और सभी कार्यानुष्ठानके साथ भगवानका किसी सम्पर्क नहीं है।

हिन्दुको आज फिर धर्मके व्यापक आदर्शमें जीवन विकसित करना होगा सन्ध्यावन्दनाके द्वारा जैसे भगवानकी उपासना होती है, वैसे भगवानके चरणोंमें निवेदन पूर्वक जीवनके सारे कर्त्तव्य व दायित्व सम्पादन के द्वारा भी भगवानकी उपासना हीती है। अतः प्रत्येक हिन्दुको जैसे दैनिक सन्ध्यावन्दना करनाहोगा, वैसे अन्यान्य सारे क्षुद्र वृहत् कर्म प्रयत्नसे भगवानको निवेदन पूर्वक कुशलतासे सम्पादन करना होगा इसलिये वेदका विधान "अहरहः सन्ध्यामुपासीत" सदैव सन्ध्या-उपासना करो। श्रीभगवान् पर समर्पणपूर्वक कर्म करनेंसे वेदका इस आदेश जीवनमें विकसित होगा।

हिन्दुके नित्यकृत्य

शौय्यात्याग विधि

(प्रत्युषमें-४ से ६ तक ब्राह्ममुहूर्त्त, इसके पूर्व्व शैय्यात्याग विधेय) रातके अन्तिम प्रहरमें शैय्यात्याग करना होगा। शैय्यामें बैठकर श्रीगुरूको स्मरण करते हुये भक्ति के साथ पाठ व प्रणाम करना है।

ओँ अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानांजन-शलाकया।
पक्षुरून्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
ओँ मन्त्रः सत्यं पूजा सत्यं सत्यं देवो निरंजनः।
गुरोर्वाक्यं सदा सत्यं सत्यमेव परं पदम्।।
ओँ अखंड-मण्डलाकारं व्याप्तं येनचराचरम्।
तत् पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
ओँ पितृ-मातृ-सुहृद्बन्धु-विद्या-तीर्थानिदेवता।
न तुल्यं गुरूणाशीघ्रं स्पर्शयेत् परमं पदम्।।
गुरूर्ब्रह्मा गुरूर्विष्णु गुरूर्देवो महेश्वरः।
गुररेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
ओँ ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।
ओँ ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्त्तिम्।
द्वन्दवातीतंगगनसदृशं तच्चमस्यादिलक्ष्यम्।।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्व्वधी साक्षिभूतम्।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सदगुरूं तं नमामि।।
त्वमेव माता च पिता त्वमेव। त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव। त्वमेव सर्व्वं मम देवदेव।।

अतः "मैं शरीर नहीं, मेरे जन्म-जरा-मृत्यु नहीं, मैं नित्य शुद्ध आत्मा हूँ"-ऐसीचिन्ता करते करते पाठ करना है—

"अहं देवो न चान्योऽस्मि ब्रह्मैवास्मिन् न शोकभाक् ।
सच्चिदानन्दरूपोऽस्मि नित्य-मुक्त स्वभाववान्।।
उसके बाद प्रार्थना—
ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गरूश्च शुक्रः शनि-राहु-केतुः कुर्व्वन्तु सर्व्वे मम सुप्रभातम्
प्रातरूत्थाय सायाह्नं सायाह्नत् प्रातरन्ततः।
यत् करोमि जगन्मातस्तदेव तव पूजनम्।।
उसके बाद :-
पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः।
पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोकी जनार्दनः।।
अह्लया द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा।
पंचकन्या स्मरेन्नित्यं महापातक-नाशनम्।।
पाठ व प्रणाम करते हुये शैय्या त्याग करना है

शौचविधि

मलमूत्रादि त्याग व दन्तधावन के बाद नहाना है। शारीरिक पीड़ा या अन्य किसी कारण जिसके नहानेमें दिक्कत है, वे कापड़े बदल लेंगे नहानेके समयकी प्रार्थना।

औं गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती
नर्म्मदे सिन्धु काबेरी जलेऽस्मिन सन्निधिं कुरू।।
औं कुरूक्षेत्र-गया-गंगा-प्रभास-पुष्कराणि च।
तीर्थान्येतानिपुण्यानिस्नानकाले भवन्तीह।।

सन्ध्याबिधि

नहाने के बाद शुष्क वस्त्र पहनकर-घरमें रहनेसे या किसी जलपात्रमें जल लेकर आसन पर बैठकर, बाहर, रास्त्रेमे, विदेशमें रहनेसे, किसी जलाशयके किनारे जल लेकर बैठकर निम्नोक्त ढंगसे संन्धावन्दना करनेकी विधि है विदेश, ट्रेन, ष्टीमार, पथ, घाट आदिमें अगर स्नान या आचमनादिके लिये जल न मिले तो

जल व्यतीत सन्ध्यावन्दना प्रत्यह उचित समय पर करना चाहिये सूर्यास्तके १ घण्टा पूर्वसे लेकर १ घण्टा बाद तक एवं सूर्योदयके १ घण्टा पूर्वसे १ घण्टा बाद तक सन्ध्यावन्दनाका समय है, इस समयके मध्य ही सन्ध्यावन्दना करना होगा। अभ्यस्त व्यक्ति स्नानके अंतमें नाभितक जलमे खड़े होकर वह कर सकते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र-स्त्री-पुरूष प्रत्येक हिन्दु के लिये संन्ध्यावन्दना अवश्य कर्त्तव्य है, न करनेसे पाप होता है।

अथ: आचमन

दाहिने हाथमें जल लेकर निम्नोका तीन मन्त्र तीनबार तीन गण्डूष जलपान पूर्वक आचमन करना होगा :-

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रयतां स्वाहा।।

अर्थ—हे अमृत! तुम उपस्तरण (विच्छादन) स्वरूप बनो। हे अमृत! तुम अपिधान (आच्छादन) स्वरूप बनो। सत्य, यशः एवं ऐश्वर्य मुझपर आश्रय हो।

अथ प्राणायाम

आसन सीधेरूपसे (ग्रीवा, वक्ष व मस्तक समरेखा पर रखकर) बैठकर, आँख व मुख बन्दकर 'ओँ' मन्त्र जाप पूर्वक नाक से श्वास बाहर करना होगा, फिर श्वास बन्द करते हुये 'ओँ' जाप होता रहेगा। बादमें श्वासग्रहण ''ओँ'' जाप की अवस्थामें करना होगा। श्वास छोड़नेके समय ८ बार, श्वास बन्द रखनेके समय १६ बार एवं पुनः श्वास ग्रहणके समय ४ बार ''ओँ'' मन्त्रका जाप करना होगा। इसतरह ३ बार प्राणायाम करना है। प्राणायाम के द्वारा तन-मन शान्त प्रफुल्ल, बलयुक्त होता है।

अथ पुनराचमनः

इसके बाद निम्नोक्त मन्त्रसे पुनः आचमन करना होगा—

ओँ शं नो देवीरभिष्टय आपो भबन्तु पीतये
शं योरभि स्रबन्तु नः।। (यजु : ३६/१२)

अर्थ—सर्वव्यापी व सर्वप्रकाशक परमेश्वर वांछित फल प्रदान पूर्वक हमारे कल्याणकारी बने व हमपर सदैव सुख प्रदान करें।

अथ इन्द्रियस्पर्श

दक्षिण हस्तकी अंगुलियाँ जलसे सिका करते हुये मन्त्र पढ़नेके साथ साथ एक एककर मुख, नाक आँख, कान नाभि, बक्ष, कंठ, मस्तक, दो बाहु, करतल व करपृष्ठ स्पर्श करना है; मन्त्र यथा—

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षु चक्षु
ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कण्ठः।
ओं शिरः। ओं वाहुभ्यां यशोबलम्। ओं करतल-करपृष्ठे

अर्थ—हे ईश्वर! मेरे वाक्य, प्राण, चक्षु, कर्ण, नाभि, हृदय, कण्ठ व मस्तक बलिष्ठ करो। मेरे दो बाहुमें यशः शक्ति दो, करतल व करपृष्ठके द्वारा धर्मानुष्ठान करूँगा।

अथ मार्जन

इस मन्त्रमें हाथकी अंगुली जलमें डूबोकर एक एक करके मस्तक, चक्षु, कण्ठ, हृदय, नाभि, पदके ऊपर जल छिड़कना है। एक एक मन्त्रके द्वारा एक एक अंगपर मनःसंयोग करनेसे संकल्प शक्ति की वृद्धि होती है।

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः।
ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः
पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः ओं सत्य
पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्व्वत्र।

अर्थ—हे ईश्वर। तुम मेरे मस्तक, नेत्र, कंठ, हृदय, नाभि दो पैर व मस्तकादि सारे अंगोंको पवित्र व बलबान करो। इसका वाद पाठ करना होगा—

ओं भुः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः ओं तपः ओं सत्यम्।

अर्थात्—ईश्वर प्राणस्वरूप, पवित्रतास्वरूप, आनन्द स्वरूप। सर्वापेक्षा श्रेष्ठ, सभीके पिता, सर्वज्ञ व अविनाशी हैं।

अथ अघमर्षण

दक्षिण हस्तमें जल लेकर नासिका के अग्रभाग पर रखकर निम्नलिखित मन्त्रमें तत्त्व चिन्ता करने हुये पाप दूर करना है। मन्त्र पाठ करते हुये उस जलमें निश्वास त्यागके साथ सारे पाप दूर हों गये। इसप्रकार चिन्तापूर्वक उस जल वायीं ओरकी भूमिपर फेंकना है।

औं ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोहध्यजायत।
ततो शत्राजायत ततः समुद्रो अर्णवः।। ऋग्वेद, १०।१९०।१
औं समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदष्वद्विश्वस्य मिषतो वशी।। ऋग्वेद, १०।१९०।२
औं सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्व्वमकल्पयत्
दिवं च पृथिबीं चाहन्तरिक्षमथो स्वः।। ऋग्वेद, १०।१९०।३

अर्थ—ज्ञानपूर्ण व अनन्तशक्तिशाली ईश्वरसे वेद व कार्य रूप प्रकृति सृष्टि हुयी है। उनके सामर्थ्यसे ही प्रकृतिकी द्वितीय विकृति व सूक्ष्म जल सृष्ट हुये हैं। जगतके शासनकर्त्ता परमेश्वर अपने सहज स्वभाव से सूक्ष्म जलके बाद दिन वा रातकी गति उत्पन्न किये। विधाताने प्रथम कल्पकी तरह ही पूर्ववत् सूर्य, चन्द्र, दिव्यलोक, पृथिवीलोक, अन्तरीक्ष व लोकांतर की सृष्टि की है।

अथ सूर्योपस्थान

ज्योतिर्मय सूर्यमण्डलमध्यस्थ इष्टमूर्त्तिको चिन्तापूर्वक निम्नोक्त मन्त्र पठनीय है—

१) औं उद्युत्यं जातवेदसं देवं बहन्ति केतवः
दृशे विश्वाय सूर्यम् (अथर्ववेद, १३।२।१६)
२) औं उद्वयं तमसस्मरि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरूत्तमम् (यजुः ३५।१४)
३) औं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरूणस्याग्नेः।
आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा
जगतस्तस्थूषश्च स्वाहा।। (यजुः ७।४२)

अर्थ—हे ईश्वर। तुम वेदके उतपादन व प्रकाशस्वरूप हो, तुम्हारे सृष्ट विश्व ही पताकाकी तरह तुम्हारी महिमा प्रचार कर रहे हैं। तुम अज्ञानान्धकारके उस पारमें सुखस्वरूप, प्रलयके परपारमें दिव्यगुणयुक्त, विद्वान् एवं धर्मात्माओंके मुक्तिदाता; तुम्हारे इस स्वरूप जानकर मानो हम तुम्हारी परमज्योति प्राप्त कर सके।

तुम हो श्रेष्ठ एवं विद्वानोंमें विस्मयकर, तुम मित्र वरूण एवं अग्निके चक्षुःस्वरूप; द्युलोक, भूलोक, अंतरीक्षके धारणकर्त्ता, विश्वके उत्पादक व आत्मा। हम मानो तुम्हें प्राप्त कर सके।

उसके बाद :—निम्नोक्त मंत्र प्रार्थना करना है

ओँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शारदः शतं
शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतं मूयश्च शरदः शतात्।। यजु ३६।२४

अर्थ—हे सर्वद्रष्टा। तुम सर्वज्ञ, शुद्ध, बुद्धके रूपमे नित्य वर्त्तमान हो, तुम्हारी महिमा मानो सौ सौ वर्ष देख सके, सौ वर्ष जीवित रहे। सौ वर्ष तुम्हारी आज्ञा पालन कर सके, सौ वर्ष तुम्हारे गुणकीर्तन करे, सौ वर्ष स्वाधीन होकर जीवित रहे। सौ वर्षसे अधिक मानो इस तरह जीवित रहे।

इसके बाद पाठ करते हुये प्रणाम करना है—

ओँ ब्रह्मणे नमः। ओँ आचार्योभ्य नमः। ओँ ऋषिभ्यो नमः
ओँ देवेभ्यो नमः। ओँ वेदेभ्यो नमः

अर्थ—ब्रह्मा, आचार्यों, ऋषियों, देवों व चारों वेदको प्रणाम।

गायत्री जपः

इसके बाद हृदयमें ज्योतिर्मय सूर्यमण्डलमध्यवर्त्ती गुरूमूर्त्ति या अभीष्ट देवमूर्त्ति, चिन्ता करते हुये निम्नोक्त गायत्री मन्त्र अन्ततः दसबार जाप करना है।

ओँ भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ओँ।। ऋग्वेद ३।६२।।१०

अर्थ—वे त्रिलोकमय हैं। सवितादेवके परब्रह्मातक वही वरणीय तेजको हम ध्यान करें। वही सविता हमारीबुद्धिवृत्तिको प्रेरित करें

नमस्कार—(निम्नोक्त मन्तमें संध्यावन्दनासमाप्त होगी)

ओं नमः शंभवाय च मयोभवाय च।

नमः शंकराय च मयस्कराय च।

नमः शिवाय च सिवतराय च।। (यजुः १६/४१)

अर्थ—मैं आनन्दस्वरूप, सुखस्वरूप, शान्तिस्वरूप मंगलमय अशेष कल्याणनिधान जगदीश्वर नमस्कारको करता हूँ।

उसके बाद

सारे विश्वजीवके प्रति प्रेम व प्रीतिके भाव बाँटकर आनन्द के साथ संकल्प करना है।

सव्वेत्रों मंगलं भुयात् सर्व्वे सन्तु निरामयाः।
सर्व्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित दुःखभाक् भवेत्।।
नन्दन्तु सर्व्वभूतानि निरातंकानि संतु च।
प्रीतिरस्तु परस्परं सिद्धिरस्तु च कर्म्मणाम्।।
स्वस्त्यस्तु नित्यशो राज्ञः शं प्रज्ञाभ्यस्तथैव च।
स्वस्त्यु द्विपदे नित्यं शान्तिरस्तु चतुष्पदे।।
शान्तिरस्तु नो देवस्य भूर्भुवः स्वः शिवं तथा।
सर्व्वतः शान्तिरस्तु नः सौम्या भूतानि चैव हि।
त्वं देव जगतः स्रष्टा पाता दैवतमेव हि।
प्रज्ञाः पालय देवेश शान्तिं कुरू जगत्पते।।
यो मयि स्निह्यति तस्य शिवमस्तु सदा भुवि।
यश्च मां द्वेष्टि लोकेऽस्मिन सोऽपि भद्राणि पश्यतु।।
ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः हरि ओं

(ज्ञातव्य–इस पाठ ही शुद्ध)

इति वैदिक सन्ध्याविधिः समाप्तः

अग्निहोत्र यज्ञविधि

सभी श्रेणीके हिन्दु विशेष दिन या पर्वाहमें एक सुनिश्चित साधारण स्थानपर सम्मिलित रूपेण इस द्रव्यमय यज्ञके अनुष्ठान करनेकी विधि है। यज्ञकर्ता उच्चस्वर तथा धीर लयसे मन्त्रसमूह उच्चारणपूर्वक अनुष्ठान समूह करते रहेंगे—उपस्थित हिन्दु जनता एकसाथ उन मन्त्रसमूह पुनरावृत्तिपूर्वक हिन्दुजातिको उन्नति-अभ्युदय, ऋद्धि-सिद्धि, ऐक्य-सख्य, शक्ति व शान्ति कामना करते हुये समवेत रूपेण आहुति प्रदान करेगी।

अथ शान्ति पाठ :-

१) **ओं सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्य्यं कर वावहै।**
तेजशिनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै

२) **ओं पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्चते।**
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।
ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः हरिः ओं।

अर्थ :- (१) हमें समवेत भावसे रक्षा करो, समवेत रूपसे पालन करो! हमें संघबद्ध व वीर्य्यवान करो। हम मानो परस्पर विद्वेष न करें (२) इन्द्रयगोचर सूक्ष्म जगत एवं इन्द्रयग्राह्य इहजगत उभय ही ब्रह्म के द्वारा पूर्ण हैं। पूर्णब्रह्म से सारी सृष्टि पूर्णरूपेण प्रकाशित है। पूर्णब्रह्मसे पूर्णसृष्टि आनेसे भी ब्रह्मकी पूर्णता पूर्णरूपमें ही अवशिष्ट है।

आचमनः

ये तीनमन्त्र पाठ करते हुये एक एकबार (प्रति एक बार) आचमन करनेकी विधि है। यथा–

(१) ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। (२) ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा। (३) ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रयतां स्वाहा।

अर्थ : (१) है अमृत! तुम उपस्तरण (विच्छादन) स्वरूप बनो
(२) हे अमृत! तुम अपिधान (आच्छादन) स्वरूप बनो
(३) सत्य, यशः एवं ऐश्वर्य मुझे आश्रय करें।

इन्द्रिय स्पर्श—ये सात मन्त्रोच्चारण पूर्वक जलके द्वारा विभिन्न अंग स्पर्श करनेकी विधि है, यथा–(१) **ओं वाङ्मे आस्येऽस्तु** (मुँहमें) (२) **ओं नसोर्मे**

प्राणोऽस्तु (नाकमें) (३) ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु (दो आँखमें) (४) ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु (दो कानमें) (५) ओं वाह्वोर्मे वलमस्तु (दो बाहुमें) (६) ओं ऊर्व्वोर्मे ओजोऽस्तु (दो उरूमें) (७) ओं अरिष्टानि मेहंगानि तनुस्तन्वा मेंसह सन्तु (सर्वागमें)।

अर्थ-मेरे मुखमें वाक्शक्ति, नासिकामें घ्राणशक्ति या प्राणशक्ति अक्षिद्वयमें दृष्टिशक्ति, कर्णद्वयमें श्रवणशक्ति, बाहुद्वयमें (आत्मरक्षा व दिग्विजकी) शक्ति, उरूद्वयमें ओजः शक्ति उत्पन्न हो।

मे अंगानि (मेरे अंगसमूह) अरिष्टानि (सार्विक कुशल) रहे; मे तनुः (मेरे शरीर) तन्वा सह (उत्तम अवस्थाके साथ) सन्तु (रहे)। [अरिष्ट = न (नही) रिष्ट (अमंगल) जिसमें, अथवा ज (नहीं) रिष्ट (अकाल मृत्यु) जिसकी]

अग्निप्रज्वालन :

इस मन्त्रमेंकपूर अग्निसंयोग करने हुये यज्ञकुण्डमें सज्जित समिधपर आग लगाना है।

ओं भुर्भूवः स्वः। ओं भुर्भूवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे। यजुः ३।५

अन्वय-दोः (आकाश) इव (तुल्य) भूम्ना (भूमन-तृतीया एकवचन, विस्मृत, व्यापक, विराट, ज्योतिष्मान्) पृथिवी (भूमि) वहिम्ण (वरिमन् + तृतीयाएकवचन, परणीया पूजनीया) तस्याः (वही तुम्हारा) पृष्ठे (पृष्टमें) पृथिवि (हे पृथिबी!) देवयजनि (देवगणकी तुष्टि विधानार्थमें आयेजित यज्ञभूमिपर) अन्नाद्याय (अन्नादिके लिये) अग्निम् अन्नादम् (अन्नभक्षणकारी अग्नि) आदधे (रह रहाहुँ)।

अर्थ : आकाशवत् व्यापक या ज्योतिष्मान, भूमिकी तरह विस्तृत तुम्हारी पीठ के ऊपर जिस स्थानमें देवगणके तृण्तार्थे यज्ञ अनुष्ठित होता है, हे पृथिवी। अन्नको राख बनाकर ऐसी आगको वहाँ अन्नादिके लिये ही स्थापन कर रहा हूँ।

छोटी छोटी लकड़ी व कपूर के द्वारा आगको इस मन्त्रमें प्रदीप्त करना है।

ओं उद्बुध्यस्वाग्ग्रे प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सं सृजेथामयं च।

अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत। यजुः १५।५४

अर्थ—उद्वुध्यस्व-उठो, अग्रे-हे अग्नि, प्रतिजागृहि-जाग्रत हो, त्वम-तुम, इष्टापूर्त्ते-श्रौत व स्मार्त्त कर्ममें, इस, सधस्ये-(सह-धा + इ = सधि = अग्नि,

स्था + ड = स्थ (स्थित), अतः सधस्य शब्दका अर्थ यज्ञवेदी) यशवेदीपर अध्युत्तरस्मिन् एवं दुसरी वेदीपर, विश्वे देवा-सभी देवगण च-एवं, यजमानः यज्ञकर्त्ता, सीदत-उपवेशन करें।

समिधाहुति :

आठ अंगुलियोंके बराबर तीन काठ घीमें डुबीकर निम्नोक्त चार मन्त्रमें आहुति देनी है

(१) ओँ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिः ब्रह्मवर्च्यसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम। (इस मंत्रमें अन्वयः-अयं-यह, इध्म-समिध, आत्मा-आधार, एक) जातवेदः-हे अग्रे, तेन-उसके द्वारा, इध्यस्व-प्रदीप्त हो, च-एव, बर्द्धस्व-वर्धित हो च-एवं, अस्मान-हमें बर्द्धित करो, प्रजया-सन्तान के द्वारा, पशुभिः-गायभैस पशुसमूह के द्वारा, ब्रह्मवर्च्यसेन-ब्रह्मविद्याके द्वारा, अन्नाद्येन-अन्नादिके द्वारा, सम एधय-सम्यकरूपमें हमें बर्द्धित करो, स्वाहा-सु-आ-ह्वे + आ = "सुहुतमस्तु" इति सायण, अर्थात् सम्पूर्णरूपेण आहुति दान, इदं-यह न मम-मेरा नहीं, अग्नये जातवेदसे-जातवेदा अग्निके लिये।

अर्थ—हे अग्रे। ये समिध तुम्हारे आधार। इसके द्वारा तुम इध्यस्व प्रदीप्त हो, बर्द्धित हो एव हमें बर्द्धित करो। हमारी सन्तानसमूह व गृह पालित पशुओकोबृद्धि करो। हमारे अन्नादि बर्द्धित करो, हेमं ब्रह्मतेज दानकरो। यह आहुति जातवेदा अग्निके लिये, मेरे लिये नहीं।

(२) ओँ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन हव्या जुहोतन स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम (यजुः ३।१)

ओँ सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जात वेदसे इदं न मम-यजुः ३।२

(इस मन्त्रमें द्वितीय घृतसिक्त काष्ठाहुति प्रदान करना है।

अन्वयः-घृर्तैः-घृतादि पवित्र द्रव्यके साथ, समिधा-काष्ठ के द्वारा, अतिथियम् - अतिथिको, यहाँ अग्निको,बाधयत-बोधित करो यहाँ प्रज्ज्वलित करो, अस्मिन-इस अग्निमें हव्या-हवनीय द्रव्य, पौष्टिक, सुमिष्ट, सुगन्धित व रोग नाशक

द्रव्यसमूह, आ जुहोतन-विशेषभावसे आहुति दान करो, दुवस्यात-इस अग्निहोत्र पालन करो, सुसमिद्धाय-उत्तमरूपेण दाध्य, शोचिषे-शुद्ध, घृतम्-घृतको, जुहोतन-आहुति दो, जातवेदसे-सर्वपदार्थमें विद्यमान, अग्नये-अग्निके लिये।

अर्थ—हे मनुष्य! घृतादि शुद्ध द्रव्यके साथ काष्ठ के द्वारा अग्निको प्रज्ज्वलित करो। इस अग्निमें पौष्टिक, मधुर, सुगन्धित रोगनाशक पदार्थकी विशेषभावसे आहुति प्रदान करो। इस देवयज्ञ या अग्निहोत्र पालन करो। यह आहुति जातवेदा अग्निके लिये, मेरे लिये नहीं। उत्तमरूपमें दाध्य, विशुद्ध व तीव्र घृतको सर्व पदार्थमें विद्यमान अग्निके लिये आहुति दो। यह आहुति जातवेदा अग्निके लिये, मेरे लिये नहीं।

(३) ओं तं त्वा समिद्भिरंगिरो घृतेन बर्द्धयामसि।

वृहच्छोचा यविष्ठय स्वाहा। इदमग्नयेहंगिरसे इदं न मम।

(इस मंत्रमें तृतीय घृतयुक्त काष्ठाहुति प्रदान करना है।

अन्वय : तम्-वही,त्वा-तुम्हें (वैदिक पाठ ''तं त्वा)

समिद्भिः काष्ठखंडके द्वारा, घृतेन-घृतके साथ, वर्द्धयामसि बृद्धि करता हूँ, वृहत-वृहत, शोचा-(शोच तृतीया एकवचन) ज्योतिके द्वारा, यविष्ठय-युवन + इष्ठ + ष्णय स्वार्थमें-युवतम।

अर्थ—हे अंगिरा अग्नि! तुम्हें समिध व घृतके द्वारा वर्धित कर रहा हूँ। युक्तम ज्योतिके द्वारा तुम वृहत हो। मेरी इस आहुति अंगिरा नामके अग्निके लिये, मेरे लिये नहीं।

घृताहुति—निम्नलिखित मन्त्र एक एकबार पढ़कर ५ घृताहुति देनी है

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व बर्द्धस्व चेद्ध बर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिः ब्रह्मवर्च्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम।

(समिधाहुतिके प्रथम मन्त्रमें इसकी व्याख्या द्रष्टव्य है)

जलसिंचन

निम्नलिखित चार मन्त्रमें यज्ञवेदीकी विभिन्न ओर जलसिचन करना है।

१) ओं अदिते अनुमन्यस्व (पूर्व दिशा)

२) ओं अनुमते अनुमन्यस्व (पश्चिम दिशा)

३) ओँ सरस्वति अनुमन्यस्व (उत्तर दिशा)

४) ओँ देव सवितः प्रसूव यज्ञं प्रसूव यज्ञपतिं भगाया। दिव्यो गन्धर्वः केतपुः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः सदतु" यजुः३०/१

(इस मन्त्रमें वेदीकी चारों दिग में जल छिड़कना है)

अन्वय.: अनुमन्यस्व-स्वीकार करो, देव-ज्ञानस्वरूप, सवितः उत्पादक, प्रसुव-उत्पन्न करो, यज्ञं-यज्ञको, यज्ञपतिम्-यज्ञकर्त्ताको, भगाय* ऐस्वर्यप्रासिके लिये, दिव्य-शुद्ध, गन्धर्वः पृथिवीके धर्त्ता, केतपुः-बूद्धिके पावक, केतम्-बुद्धिको, नः-हमारे, पुनातु-पवित्र करे, वाचस्पतिः-वाणीके ईश्वर, वाचम्-वाणीको, नः-हमारे, स्वदतु-मधुर करें।

आर्थः—हे अदिते। हे अनुमते। हे सरस्वति। इस आहुति स्वीकार करो। हे ज्ञानस्वरूप स्रष्टा यज्ञको उत्पादन करो यज्ञकर्त्ताको उत्पादन करो, ऐश्वर्यके लिये पृथिवीके धर्त्ता, बुद्धिके पावक, शुद्ध परमात्मन्। हमारी बुद्धिको पवित्र करें। वाणीके अधिपति परब्रह्म। हमारी वाणीको मधुर करें।

पुनः घृताहुति :

वेदीकी चारोंओर जलसिंचन के बाद निम्नलिखित मन्त्रमें घृताहुति प्रदान करना है। यज्ञकुण्डकी उत्तर दिशामें प्रथम आहुति व दक्षिणदिशामें द्वितीय आहुति देना है। ये दो घृताहुतिको "आघारावाज्य हुति" कहते हैं। इसके वाद तृतीय व चतुर्थ आहुति यइकुण्डकी बीचमें देना है। यह 'आज्यभागाहुति' कहते हैं। ये चार आहुति घृतके द्वारा स्रुवा पूर्ण करते हुये वृद्धांगुली, मध्यमा व अनामिका के द्वारा स्रुवा धारणपूर्वक प्रदान करना है।

आघारावाज्याहुति :

१) ओँ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम (वेदीके उत्तर भागमे)

२) ओँ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदन्न मम (वेदीके दक्षिण भागमें)

आज्यभागाहुति

ओँ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम।

ओँ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय इदन्न मम (अग्निके मध्यभागमें)

अर्थ—स्वाहा = सु-आ—हे + आ—"सुहुतमस्तु" सायण। अर्थात् सम्पूर्णरूपेण आहुतिदान।

इस उत्तम आहुति सम्यकरूपमें अग्निके लिये हो। यह अग्नि के लिये, मेरे लिये नहीं। इस उत्तम आहुति सम्यकरूपमें सोमके लिये हो। यह सोभके लिये, मेरे लिये नहीं। इस उत्तम आहुति सम्यकरूपमें प्रजापतिके लिये हो। यह प्रजा पतिके लिये, मेरे लिये नहीं। इस उत्तम आहुति सम्यक रूपमें इन्द्रके लिये हो। यह इन्द्रके लिये, मेरे लिये नहीं।

व्याहृति आहुति : (दिवसमें)

१) औं सूर्यो ज्योति र्ज्योतिः सूर्य स्वाहा

२) औं सूर्यो वर्च्चो र्ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा

३) औं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा

४) औं सजुर्देवेन सवित्रा सजुरूषसेन्द्रवत्या

जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा (शुक्लयजुः ३/१०)

अर्थ—सूर्यके समान प्रकाशक, सर्वजगदव्यापी परमात्माकी आज्ञा पालनके लिये हम यह आहुति दे रहे हैं। जिसके द्वारा हम रोगरोहित होकर कल्याणप्राप्त होंगे।

व्याहृति आहुति : (सन्ध्यामे)

१) औं अग्निर्ज्योति र्ज्योतिरग्नि स्वाहा।

२) औं अग्निर्बर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।

३) औं अग्निर्ज्योति र्ज्योतिरग्नि स्वाहा।

४) औं सजुर्देवेन सवित्रा सजुरात्र्येन्द्रवत्या

जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा (शुक्लयजुः ३/१०)

अर्थः—अग्निके समान प्रकाशक, सर्वजगदव्यापी, परमात्माकी आज्ञा पालन के लिये हम इस आहुति दे रहे हैं, जिसेक द्वारा हमारा कल्याण होगा।

व्याहृति आहुति—(दिन रात उभय समयमें ही)

१) औं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्नये प्राणाय इदन्न मम।

२) औं भूवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। इदं वायवेऽपानाय इदन्न मम।

३) ओँ स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा। इदमादित्याय व्यानाय इदन्न मम।

४) ओँ भूर्भुवः स्वरग्निवायादिज्येभ्य प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा।

इदम्ग्निवाय्वादित्येभ्यः इदन्न मम।

५) ओँ आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् स्वाहा।

अर्थ—प्राणवायुके उतकर्षार्थे इस उत्तम आहुति सम्यकरूपमे मूलोकके अधिष्ठात्री देवता अग्निके लिये हो। यह प्राणवायुके उत्कर्षार्थे अग्निके लिये, मेरेलिये नहीं।

आवान वायुके उतकर्षार्थे इस उत्तम आहुति भूवर्लोक के अधिष्ठात्री देवता वायुके लिये हो। यह वायु देवताके लियें, मेरे लिये नहीं।

व्यानवायुके उत्कर्षार्थे उस उत्तम आहुति सम्यकरूपमें खलेकिके अधिष्ठात्री देवता आदित्यके लिये हो। यह आदित्यके लिये, मेरेलिये नहीं।

प्राण, आपान व व्यानवायुके (समग्र प्राणशक्तिके) उत्कर्षार्थे इस उत्तम आहुति सम्यकरूपमें यथाक्रम पृथिवी, अन्तरीक्ष व स्वर्लोकके अधिष्ठात्री देवता अग्नि, वायु व आदित्यके लिये हो। यह अग्नि, वायु व आदित्यके लिये, मेरे लिये नहीं।

जल, तेज, रस व अमृतरूप ब्रह्म-भूः, भुवः, स्वः ये तीनलोक देदीप्यमान किये हैं। इस आहुति उन्हींके उद्देश्यमें हैं।

गायत्री आहुति :—(तीनबार)

ओँ भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुवरिण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ओँ स्वाहा।

भूः भुवः स्वः—ये तीन लोकमें जो व्यापृत हैं। देवस्य सवितुः—सविता देवके, भर्गो–कर्मणि द्वितीया, ज्योतिः को तत वरेण्यं भर्गो–कर्मणि द्वितीया, ज्योतिः को; धीमहि-ध्यान करता हूँ, यः (जो) सविता, नः हमारे, धियः-बुद्धिवृत्तिको, प्रचोदयात्-प्रेरित करें।

* ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः
ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इति स्मृतः।।

सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण वीर्य, सम्पूर्ण श्री, सम्पूर्ण-यशः, सम्पूर्ण ज्ञान एवं सम्पूर्ण वैराग्य-ये छह ''भग'' नामसे अभिहित है।

अर्थ—वे त्रिलोकमय है। सविता देवके परब्रह्मात्मक वही वरणीय तेजको हम ध्यान करते हैं। वही सविता हमारी बुद्धिबृत्तिको प्रेरित करें।

पूर्णाहुति (तीनबार)

ओँ सर्ब्वं वै पूर्णं स्वाहा।

अर्थ—सभी निश्चितरूपमें पूर्ण हो।

शरीरपर घृत म्रक्षण—ये सात मन्त्र जलमें प्रक्षिप्त घृत उभय हाथमें लेपकर आगमें ईषदुत्तप्त करते हुये हाय व मुखमें लेपना है।

(१) ओँ तनुपा अग्ने ऽसि तन्वं में पाहि। (२) ओँ आयुर्दाग्ने ऽसि आयुर्मे देहि (३) ओँ वर्च्चोदा अग्ने ऽसि वर्च्चो मे देहि (४) ओँ अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्म आपृण, (५) ओँ मेंधां मे देवः सविता आदधातु (६) ओँ मेधां में देवी सरस्वती आदधातु। (७) ओँ मेधां में अस्विनो देवावाधतों पुष्कस्त्रजौ।

ओँ ब्रह्मार्पणं ब्रह्मऽविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम

ब्रह्मैव तेन गन्तव्य ब्रह्मकर्म्मसमाधिना

ओँ तत्सत् हरिः ओँ

अर्थः—शरीर रक्षक अग्ने। मेरे शरीरको रक्षा करो। हे आयुर्दानकारी अग्ने! मुझे आयु दान करो। हे तेजोदानकारी अग्ने! मुझे तेजः दान करो। हे अग्ने! मेरे शरीरमें जो न्यूनता है, वह तुम सम्यकरूपमें पूर्ण करो। सवितृदेव मुझे मेधा दान करें। देवी सरस्वती मुझे मेधा दान करें पद्ममालाधारी देव अश्विनीकुमार द्वय मुझे मेधादान करें। होमके अपर्ण (कलछी) ब्रह्म, घृत ब्रह्म, अग्नि ब्रह्म, होता ब्रह्म। ब्रह्मकर्ममें एकाग्रचित्त व्यक्ति ब्रह्मको ही प्राप्त होते हैं।

शान्तिपाठ :

सर्व्वेषां मंगलं भूयात् सर्व्वे सन्तु निरामयाः।
सर्व्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाक् भवेत्।।
नन्दन्तु सर्व्वभूतानि निरातंकानि सन्तु च।
प्रीतिरस्तु परस्परं सिद्धिरस्तु च कर्म्मणाम्।
स्वस्त्यस्तु नित्यशो राज्ञः शं प्रजाभ्यस्तथैव च।
स्वस्त्यस्तु द्विपदे नित्यं शान्तिरस्तु चतुष्पदे।।

शान्तिरस्तु नो देवस्य भूर्भुवः स्वः शिवं तथा।
सर्व्वतंः शान्तिरस्तु नः सौम्या भूतानि चैव हि।।
त्वं देवः जगतः स्रष्टा पाता दैवतमेव हि।
प्रज्ञाः पालय देवेश शान्तिं कुरू जगतपते।।
यो मयि स्निद्यति तस्य शिवमस्तु सदा भुवि।
यश्च मां द्वेष्टि लोकेऽस्मिन् सोऽपि भद्राणि पश्यतु।।
औं शान्तिः शान्तिः शान्तिः हरि औं
अर्थ— सभीके मंगल हो, सभी नीरोग हो
सभी शुभ देंखें, किसीको दुःख न हो।
आनन्दित हो सभी प्राणी, आतंक शून्य हो सब।
परस्परमें प्रीति हो, सब कर्मकी सिद्धि हो।
राजाको प्रत्यह शुभ हो, शुभ हो सभी प्रजाके
सब मानवमें स्वस्ति विराजित रहे, चतुष्पदकी शान्ति हो
देवताकी शान्ति हो, भूः भुवः स्वः ये त्रिलोकके मंगल हो
शान्ति हो हमारी सर्वत्र, जीवसमूह शान्त हो।।
हे देव! तुम जगतके स्रष्टा, हे देव! तुम्हीं सभीके पालनकर्त्ता।
हे देवेश! सभी प्रजाको पालन करो, हे जगदीश! सवकी शान्ति करो।
मुझे जो स्नेह करते है, इस भूतलमे सदैव, उसके मंगल हो।
इस ससारमें जो मुझे द्वेष करते है, वह भी शुभ दर्शन करे
औं शान्ति औं शान्ति अैं शान्ति हरि औं।

शान्तिवाहि सिंचन :

औं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिविश्वे देवा शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरधि-यजुः ३६/१७

अर्थ—द्युलोक व अन्तरिक्षलोक की जो शान्ति, पृथ्वी के लोगोंकी भी वही शान्ति वैसे ओषधिकी, वनस्पतिकी सब देवगणकी, ब्रह्मकी, सारे जगतकी एवं स्वरूपतः शान्तिकी जो शान्ति-उन सब मेरे हो।

अग्नि विसर्जन :

(१) ओं अग्ने त्वं समुद्रं गच्छ (अग्निमें जल सिंचन)

(२) ओं पृथ्वि त्वं शीतला भव (अग्निकुंडमें दही निक्षेप)

पंचयज्ञ विधि

हिन्दुऋषिने हिन्दु जीवनके सारे कर्त्तव्यों पाँचभागोमें विभक्त करते हुये पंचयज्ञ नामसे अभिहित किया है। हिन्दुशास्त्रके उपदेश—मनुष्य पाँच ऋण लेकर जन्मग्रहण करते हैं देव-ऋण, ऋषि-ऋण, पितृ-ऋण, नृ-ऋण, भूत-ऋण, पंचयज्ञ सम्पादन के द्वारा ये ऋणसमूह परिशोध करते करते मनुष्य मुक्तिके अधिकारी हो उठते हैं। प्रात्यहिक जीवनमें प्रत्येक हिन्दुको साध्यानुसार ये पंचयज्ञ सम्पादन करना अवश्य कर्त्तव्य है।

ब्रह्मयज्ञ

भगवानकी उपासनाको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं, इस यज्ञके द्वारा देवऋण परिशोध होता है। प्रत्यह नियमानुसार सन्ध्या उपासना करनेसे ही देवयज्ञ सम्पन्नहोता है। इस देव यज्ञ या सन्ध्या-उपासना-भगवानके नामजप-ध्यान न कर जलग्रहण करना अनुचित है। प्रत्येकको नियमित संन्ध्यावन्दना व भगवदुपासना करनी चाहिये। समाजको वह करने में प्रेरणा व शिक्षा मिलेंगे।

ऋषियज्ञ

शास्त्र या सदग्रन्थ पाठको ऋषियज्ञकहते हैं। इस ऋषियज्ञ सम्पन्न करनेसे ऋषि ऋण परिशोध होता है। इसलिये प्रत्यह प्रत्येक हिन्दुको अल्प अल्प कर गीता, चण्डी-भागवत पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारतआदि पाठ करना हैं। स्वयम पढ़नेमें अक्षम होनेपर अन्यके द्वारा पढ़वाकर श्रवण करना है एवं साध्यानुसार समाजकेमध्य ज्ञानविस्तारका प्रयत्न करना चाहियें।

पितृयज्ञ

श्राद्ध-तपर्णादिको पितृयज्ञकहते हैं। तर्पणविधिके अनुसार प्रत्यह तर्पण करनेसे एवं मासिक, त्रैमासिक या वार्षिक श्राद्धादि सम्पन्न करनेसे पितृ-ऋण

परिशोध होता हैं। अतः प्रत्येक हिन्दुको साध्यानुसार इस पितृयज्ञका अनुष्ठान करना होगा। जीवितावस्थामें पितामाता व अभिभावकों के तृप्ति विधान भी पितृयज्ञ है। समाजको उक्त कर्त्तव्य सम्पादनमें प्रेरणा व शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

नृयज्ञ

आश्रित, पोष्यवर्गके भरणपोषण व प्रतिपालन, अंध, आतुर, गरीब आदिको दान व सेवा, अतिथि सत्कार, सामाजिक हितकर कार्यादिमें अर्थ व सामर्थ्यके द्वारा सहायता करना ही नृयज्ञ है। इस नृ-यज्ञके द्वारा नृ-ऋण परिशोध होता है। प्रत्येक हिन्दुको यथासाध्य इस नृयज्ञ सम्पादन करना होगा।

भूतयज्ञ

मनुष्येतर प्राणी समूहको (गाय-भैस, कुत्ता, बिल्ली आदि सारे तिर्यक प्राणी) वृक्षलता झाड़ी आदि स्थावर प्राणीसमूहको आहार-पानीयके द्वारा पोषण करना एवं रोगादिमें चिकित्सा व सेवाकरना ही भूतयज्ञ है। इसके द्वारा भूत-ऋण परिशोध होता है। गृहपालित पशुओंके पालन-पोषण करना एवं तुलसी-पीपल आदि वृक्षकी जड़में जलदान करना हिन्दुके नित्यकर्त्तव्य है।

मनुष्यको जगतमें जीवित रहनेके लिये देवतासे लेकर तृणतक प्रत्येकके निकटसे कुछ कुछ सहारा लेना पड़ता है। इस लिये प्रत्येक मनुष्य-जगतके चेतन-अचेतन सबके निकट थोड़ा-सा आभारी है। अतः सारेजीवनमें सारेकाम ऐसा होनाचाहिये जिसके द्वारा उसका ऋण मिटता है। ऋण परिशोध न करनेसे उसकी मुक्ति नही। बारंवार पृथ्वीमे जन्मग्रहणपूर्वक इस ऋण परिशोधकी चेष्टा करनी होगी ज्ञानपूर्वक जो व्यक्ति साध्यानुसार उक्त पंचयज्ञ सम्पादन करते हुये पंचऋण परिशोधकी चेष्टा करते है-वह द्रुत मुक्तिके पथ पर अग्रसर होता है। इसलिये हिन्दुऋषिने हिन्दुसमाजके लिये इस पंचयज्ञकी व्यवस्था की है।

तर्पणविधि :

हिन्दु मात्र ही स्नानके समय अंजलि पूर्ण जलग्रहण पूर्वक निम्नोक्त मन्त्रविधानके द्वारा तर्पण करना कर्त्तव्य है।

देवतर्पण :

स्नानके अंतमें नाभितक जलमें खड़े होकर या शुष्क वस्त्र पहनकर अल्पजलमें रहकर अंजलिभर जल लेकर निम्नोक्त मन्त्रमें प्रदान करना है।

ॐ ब्रह्मा तृण्यताम्। ॐ विष्णुस्तृप्यताम् ॐ रूद्रस्तृण्यताम्।

ॐ प्रजापतिस्तृण्यताम्।

ॐ देवा यक्षास्तथा नागा गन्धर्वाण्सऽसोहसुराः
क्रूराः सर्पाः सुपर्णाश्च तरवोजिह्मगाः स्वगाः।
विद्याधरा जलाधारा स्तथैवाकाश गामिनः।
निराहाराश्च ये जीवाः पापे धर्मे रताश्च ये।
तेषामाण्यायनायैतद दीयते सलिलं मया।।

मनुष्यतर्पण :

ॐ सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः
कपिलश्चासुरिश्चैव वोदुः पंचशिखस्तथा
सर्वे ने तृप्तिमायान्तु महत्तेनाम्बूना सदा।

ऋषितर्पम

ॐ मरीचिस्तृताम् ॐ अतिस्तृण्यताम् ॐ अंगिरास्मृण्यताम्
ॐ पुलस्तस्तृप्यताम् ॐ पुलहस्तृण्यताम् ॐ क्रतूस्तृण्यताम्
ॐ प्रचेतास्तृण्यताम् ॐ वशिष्टस्तृण्यताम् ॐ भृगुस्तृण्यताम्
ॐ नारदस्तृण्तताम्

भीष्मतर्पण

ॐ भीष्मः शान्तनवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रिय
आभिरदिभरवाण्तोतु पुत्रपौत्रोचितां क्रियाम्

पितृतर्पण

उसके बाद पिता, पितामह, प्रपितामह, माता, मातामह, प्रमातामह, पितामही, प्रपितामही, मातामही, प्रमातामही आदिके नाम व गोत्र स्मरणपूर्वक जलदान करना है।

रामतर्पणः ओँ आब्रह्मभूवनाल्लोका देवर्पिपितृमानवाः
तृण्यन्तु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः।
अतीतकुलकोटिनां सण्तद्वीपनिवासिनाम्।
मया दत्तेनतोयेन तृण्यन्तु भुवनत्रयम्।

लक्ष्मणतर्पण

ओँ आब्रह्मस्तम्बपर्स्यन्तं जगत तृप्यतु।।

पितृस्तुति

ओँ पिता स्वर्गः पिता धर्म्मः पिता हि परमं तपः
पितरि प्रीतमापन्ने प्रीयन्ते सर्व्वदेवताः।।

हिन्दुको सदाचारविधि

(प्रत्येक हिन्दु नरनारीके लिये पालनीय)

स्वास्थ्य व पवित्रता

(१) प्रत्युषमें ब्राह्ममुहूर्त्तमें शैय्यात्याग करना होगा! सूर्योदयके १ घण्टा पूर्व समय ब्राह्ममुहूर्त्त है।

(२) मलमूत्रादि त्यागके बाद उत्तमरूपेण जलशोच, विधिदत दन्त धावन व मुख प्रक्षालन करना है।

(३) गृह, शैय्या व पहननेका वस्त्रादि साफ रखना है।

(४) बुरासमयपर जहाँ तहाँ जोकुछ नहीं खाना है।

(५) संन्ध्या उपासना न कर, भगवानको अर्पण के बिना या मुख धोने के पहले या किसीके जूठे खाना नहीं ग्रहण करना चाहिये गुरु या मातापिताके भोजनके बाद प्रसाद के रूपमें ग्रहणमें बाधा नहीं है।

(६) गंजिका, शराब, अफीम, चरस, चूरट, बिड़ि, हेरोइन, तम्बाकू, भंग आदि ग्रहण न करना, चाय, कफि आदि बर्जन करना या थोड़ा पीना है।

(७) ताश, शतरंज का खेल, पासा आदि अलस क्रीडा नहीं खेलना।

उसके बदले शारीरिक व्यायामबहुल खेलकूद, कसरत या अन्य किसी परिश्रम सापेक्ष काम करना है।

(८) हिन्दुके लिये निषिद्ध खाद्य—अंडा, मांसादि, प्याज, लहसून आदि त्याग करना।

शरीर संयम

(१) रिपु व इन्द्रिय समूहको सयत्न शासन व संयममें रखना है।

(२) बालक व युवकोंको वीर्य्यधारण करना है। (क)

(२) बिवाहित व्यक्तियों इन्द्रियसंयम आभ्यास करेंगे। (ख)

(४) इन्द्रिके लिये उत्तेजक आहार नहीं खाना है।

मनः संयममूलक :

(१) सदैव किसी न किसी काममें नियुक्त रहना है।

(२) अवसरपर अकेला या साथियोंसे मिलकर रामायण, महाभारत, पुराण, गीता, भागवत, उपनिषद या अन्य सदग्रन्थादि पाठ करना है। खराब नाटक, उपन्यास आदि न पढ़ना ही उचित है।

(३) किसी प्रकार पापकार्य या पापचिन्ता हो जानेसे, अनुतप्त मनसे भगवानके निकट क्षमा माँगना एवं जप के द्वारा प्रायश्चित्त करना है। पुनः पाप न करनेका संकल्प लेना है।

(४) प्रत्यह प्रत्यूषमें तथा सन्ध्यामें नियमानुसार उपासना करना उचित है।

पारिवारिक

(१) पितामाता आदि गुरूजनोंको भक्ति व सम्मान करना है।

(२) परिवारमें बड़े व छोटे सभी परस्पर स्नेह-प्रीति-श्रद्धा-भक्ति भावसे मिलजुलकर रहना है। परस्परकी गलतियाँ नहीं देखना है।

(३) परिवारस्य सब यथासंभव समवेत रूपनें सन्ध्या उपासना व भगवच्चरणमें हिन्दु-समाजके कल्याणकी प्रार्थना करना है।

(४) अवसरमें अभिभावकीं परिवारके सबके साथ बैठकर रामायण, महाभारत आदिके पाठ व आलोचना करेंगे अथवा नाम कीर्त्तनादि कर सकते हैं।

(५) अभिभावक परिवारके लोगोंको यथोचित कर्त्तव्य विभाग व दायित्व सोपेंगे।

(६) परिवारके प्रत्येक व्याक्ति समग्र परिवारके हित एवं उन्नति साधनमें सचेष्ट होंगे।

(७) स्वार्थभाव महापापके रूपमें गण्य होगा।

(८) समग्र परिवारके कल्याणमें व्यक्तिगत सुख व स्वार्थ त्याग करना होगा।

सामाजिक

(१) हिन्दुओं किसी भी श्रेणी या अवस्थाके क्यो न हो परस्पर भातृभावमे मिलकर रहना है एवं सर्वविषयमें परस्पर सहारा व सहायता करना है।

(२) सक्षम हिन्दुओं अक्षम हिन्दु-भाइयोंको दु:ख-सुखोमें सर्वप्रकारेण मदद करेंगे।

(३) शिक्षित व सदाचारी हिन्दुओं, आशिक्षित व पिछड़े दुये हिन्दु भाइयोको अवज्ञा या अवहेला न कर उनको शिक्षित व सदाचारी बनानेके लिये नीति, धर्म, स्वास्थ्य व सदाचार विषयक शिक्षादानकी व्यवस्था करेंगे।

(४) हिन्दुजाति व समाजके हितकर किसी कार्य कोई आरंभ करनेपर अन्यान्य हिन्दु भाइयों प्रयत्न एवं सर्वविध उपायसे उस कार्यमें सहायता दान करेंगे।

(५) हिन्दुओं विशेष विशेष पर्वाहमें सब समवेत रूपमें उपासना करेंगे।

(६) हिन्दुओं परस्पर घनिष्ठ व संधबद्ध होकर रहेंगे एवं विपदके समय एक त्रिन होकर आत्मरक्षामें, धर्म-समाज-संस्कृति व नारीकी रक्षामें उद्योगी बनेंगे।

(७) समाजके कल्याण में व्याक्तिक व पारिवारिक सुख-सुविधा स्वार्थ विसर्जन देना होगा।

हिन्दुके मूल आदर्श :

(१) लक्ष्य क्या है? महामुक्ति, आत्मोपलब्धि
(२) धर्म क्या है? त्याग, संयम, सत्य, ब्रह्मचर्य।
(३) महामृत्यु क्या है? आत्मविस्मृति
(४) प्रकृत जीवन क्या है? आत्मबोध, आत्मस्मृति, आत्मानुभूति
(५) महापुण्य क्या है? वीरत्व, पुरूषत्व, मनुषत्व, मुमुक्षुत्व
(६) महापाप क्या है? दुर्वलता, कायरता, कापुरूषता, संकीर्णता, स्वार्थभाव
(७) महाशक्ति क्या है? धैर्य, स्थैर्य, सहिष्णुता
(८) महासंबल क्या है? आत्मविशास, आत्मनिर्भरता, आत्ममर्यादा
(९) महाशत्रु क्या है? आलस्य, निद्रा, तन्द्रा, जड़ता, रिपु व इन्द्रियसमूह
(१०) परम मित्र क्या है? उद्यम, उतसाह, अध्यवसाय।

हिन्दुकी मूलनीति :

(१) भगवद्भिसाकी व स्वधर्ममें निष्ठावान होना होगा।
(२) गुरू, ऋषि, व शास्त्रमें विश्वासी व श्रद्धावान होना होगा।
(३) हिन्दुत्वकी नीति व सदाचार अबलम्बन पूर्वक चलना होगा।
(४) स्वधर्ममें अनुरागी व निष्ठावान होना होगा।
(५) आहार-बिहार, पोशाक-पहनावेमें जहँातक हो संभव हिन्दु भावधारा मानते हुये चलना होगा।
(६) नित्य सन्ध्या उपासना करनी होगी।
(७) वीरता व शक्तिकी चर्चाकरनी होगी।
(८) परस्पर संघबद्ध होकर काम करनेका अभ्यास करना होगा।
(९) हिन्दुधर्म, हिन्दुसमाज एव हिन्दुसभ्यता का गौरव एवं गर्रबोध-हृदयमें जाग्रत रखना होगा।
(१०) हिन्दुधर्म पर आक्रमण प्रतिरोध एवं हिन्दुसमाजको विविध आक्रमण से रक्षाके लिये हिन्दुओंको संधबद्ध व सहयोगी बनना होगा।

हिन्दु-मिलन-मन्दिरमें साप्ताहिक अधिवेशनमें करणीय

(१) सवश्रेणीके हिन्दु मिलन-मन्दिरमें समवेत होंगे। मिलन-मंदिको सभामें सबको सम-मर्यादा मिलेगी।

(२) पहले कुछ समयतक करताल-खोल अथवा ढाक-ढोल-कँासि वाद्यके साथ हरिनाम संकीर्तन होगा।

(३) इसके बाद समवेत भावमें सन्ध्या उपासना करनी चाहिये किसी एक सभ्य अग्रणी होकर थोड़ा थोड़ा कर मन्त्रपाठ व अनुष्ठान करते रहेंगे। अन्यान्य सभी एकसाथ वही आवृत्ति कर तद्रूप अनुष्ठान करेंगे।

(४) उसके बाद रामायण, महाभारत, गीता या चण्डी आदि ग्रन्थ कोई एक व्यक्ति पाठ कर सबको समझा देंगे।

(५) उसके बाद एक व्यक्ति संघरचित पुस्तकादि एवं संघकी मासिक पत्रिका "प्रणव" पाठ कर सबको समझा देंगे।

(६) ततपर स्थानीय हिन्दुओंकी समस्या, अभाव, अभियोग विपदके बारेमें आलोचनापूर्वक प्रतिकारके उपाय स्थिर करना होगा।

(७) रक्षीदल समवेत व्यांयाम। क्रीड़ा व कुचकावाज (पैरेड) करेंगे।

पंचायत सभाका कर्त्तव्य

प्रत्येक मिलन मन्दिर की कमिटिके पाँच प्रधान सभ्यको लेकर पंचायत सभा होगी। इस पंचायत सभा मिलन मंदिर के साप्ताहिक अधिवेशन दिनमें।

(१) हिन्दुओंमें विवाद, विसंबाद या मनभुटाव रहनेसे मीमांसा कर देगी।

(२) कोई विपन्न होनेसे उसे सहायतादानकी व्यवस्थाकरेगी।

(३) कोई अनाचार-कदाचार करनेसे उसे हितोपदेश के द्वारा सुधार लेंगी।

(४) सभाको लक्ष्य रखना होगा किसी कारणवश हिन्दुओंमें भेद-विभेद की सृष्टि नहों सके।

रक्षिदलके कर्त्तव्य

प्रत्येक बालक, युवक, वृद्ध हिन्दुमात्र ही हिन्दुधर्म व समाजके रक्षी हैं। उनमें १५ से ४५ वर्षतक प्रत्येक हिन्दुको रक्षीदल भुक्त होना होगा।

(१) दलपति के अधीनमें नियमित व्यायाम करना
(२) लाठि, छुरी, युयुत्सु, कुश्ती आदि शरीर-निर्माणके खेल शिक्षा करना।
(३) दलोंमें विभक्त होकर प्रयोजनानुसार दिन या रातमें ग्राम पहारा देना।
(४) मिलन मंदिरके लिये मुट्ठी भरकी भिक्षा अदा करना।
(५) कोई हिन्दु विपन्न होनेसे उसकी रक्षा करना एवं दुष्ट दुर्वृत्तको दमन करना।
(६) सप्ताहमें एकदिन दल पतिके अधीनमें समस्त रक्षी दलबद्ध होकर ग्राम प्रदक्षिण करना।
(७) बिपदापद या दंगा हंगामेकी सूचना होनेसे नेताके अधीन अपने हाथमें न लेनेकी कोशिश करना।
(८) प्रत्येक रक्षीके साथ सदैव लाठी या त्रिशूल या अन्य किसी निर्दोष हथियार रखना।
(९) मिलन-मन्दिरकी साप्ताहिक सभाके दिन प्रत्येक रक्षीका योगदान करना।
(१०) मिलन मंदिरके कार्यकर्ताके निर्देशानुसार कार्यादि सम्पन्न करना।

"ॐ तत्सत् ॐ"

हिन्दुत्वके संरक्षणमें श्रीश्रीआचार्यकी कर्मपरिकल्पना

"मैं सोच रहा हूँ ऐसी एक कर्म परिकल्पनाकी जों आसन्न भविष्यमें देशके सबको ग्रहण किये बिना उपाय नहीं। मैं जो आन्दोलन प्रवर्त्तन करूँगा उसके द्वारा जातिगठन कल्पमें अनुष्ठित सारे कर्मपन्था ही सफलताके पथ परअग्रसर होंगे, तथापि किसी प्रतिष्ठान या कोई कर्मपथसे विरोधिता नहीं रहेगी।"

"में हिन्दुको हिन्दु कहकर पूकारता चाहता हूँ। मैं सारी हिन्दु जनताको" मैं हिन्दु", "मैं हिन्दु" जप कराऊँगा। यह हिन्दुत्वबोध जगनेके साथ साथ हिन्दुके लुप्त तेजोवीर्य शक्ति-सामर्थ्य जाग उठेंगे।

"हम चाहते हैं-संस्कार, मिलन, संगठन। पर हम ऐसे कुछ नही करेंगे जिससे समाजमें विप्लव आ सकता है अथवा आदर्शके विपर्यय घट सकता है।

हम सेसी सेवा ही करेंगे जिससे खंड-विखंड हिन्दुजाति सम्मिलित सबल, स्वस्थ संधबद्ध, शक्तिमानहोकर अपने आदर्शके तथा लक्षके पथपर चल सकती है।''

''भारतवर्षकी हिन्दुजातिके स्वभाव ही ऐसे है कि धर्मको बुनियाद किये बिना यथार्थ समष्टिजीवन गठन असंभव है, कंग्रेस राजनैतिक व अर्थनैतिक नींवपर भारतीय समष्टि जीवन गढ़ना चाहते है, हम धर्मके नींवपर जाति गठन करना चाहते हैं।

''हम रचना करेंगे एक मिलनक्षेत्र, जहाँ सर्वग्रेणीके हिन्दु एकत्रित हो सकेंगे। इस मिलन क्षेत्रका नाम होगा-हिन्दु मिलन-मन्दिर। वह हिन्दुके सार्वजनीन मिलन क्षेत्र-सम्मिलित शक्तिकेन्द्र। किसी भी समयपर जो कोई पर्व या अनुष्ठान के उपलक्ष्यमें अति अल्प समयके मध्य सहस्र सहस्र हिन्दु वहाँ सम्मिलित होंगे, इस मिलन-मन्दिर होगा धर्मप्रचार, शिक्षाविस्तार, समाज संस्कार, शक्ति गठनके केन्द्र। इस मिलन-मन्दिर के द्वारा ही हिन्दुके परिवार समाज-सारी जातीय समस्याका समाधान होगा।''

''संकल्पमें दृढ़ प्रतिज्ञामें अविचलित जो, सारी सिद्धियाँ उसके हस्तगत, इस महाशक्तिकी वाणी मैं हिन्दुजातिके प्रतेयकको सुनाऊँगा, सवके मध्य महाशक्तिका संचार करूँगा।''

''लोग काठ, तुलसीकी मालामें जप करते हैं, मैंने जीवनभर जप किया है जातिगठन, जातिगठन, जातिगठन''

''आदिवासी, तपशीली, वर्णहिन्दु आदि सबश्रेणीकी हिन्दु जनतामें आंतरिक मिलन, ऐक्य, संख्य, प्रेमप्रीति ही आज एकमात्र काम्य है।

इस वर्णहिन्दुओको कहरपन त्याग करते हुये आंतरिक प्रेम व प्रीति संचारपूर्वक तपशीली भाइयोंसे मिलित होना होगा।। दूसरी ओर तपशीली हिन्दुओंको भिन्न धर्मालम्बीके झूठी बात व प्रलोभन उपेक्षा करते हुये वर्णहिन्दुओंके प्रति क्षोभ व विद्वेष विसर्जनपूर्वक अनुष्ठित चित्तमें हिन्दुके मिलन व कल्याणयज्ञमें योगदानकरना होगा।''

"सूर्य उदय होनेसे अंधकार दूर होता है। तब अंधकार अपसारणके लिये कोई दूसरे उपायकी जरूरत नहीं पड़ती। वैसे हिन्दु शक्तिशाली व सुसंगठित होनेसे साम्प्रदायिक मनोवृत्ति सम्पन्न दुर्वृत्तों अपने आप दूर हटेंगे।"

"धर्मन्तरित नरनारीका शुद्धिकरण पूर्वक हिन्दु समाजमें पुनर्ग्रहण किया जाय, किन्तु केवल शुद्धिकरण अनुष्ठानके द्वारा ही धर्मान्तरकी समस्याका आंतरिक समाधान नहीं होगा। हमारे समाजके द्वार बन्द हुये है। पहले समाजके बन्द दरवाजे अवाध खोल देना आवश्यक है।

हिन्दुधर्मके उदार मतवाद सबको समझाकर समाजकी मानसिकता बनाना प्रयोजन है। हिन्दु किसी धर्मको अस्वीकार नहीं करती है। साकार-निराकार, द्वैताद्वैत, शाक्त-वैष्णाव आदि मत-पथकी जैसी मर्यादा है। हिन्दुधर्ममें वैसे स्वधर्ममें निष्ठा रखकर भी हिन्दु अन्य धर्मके प्रति श्रद्धा रखती है। गीर्जेके पाससे जाते समय वहाँ कर जोड़में प्रणाम करनेमें हिन्दुको कुण्ठा का अनुभव नहीं होता। मसजिद, दरगेमें तो वह प्राय: सिन्नि मन्नत करते है मैं भी कहता हूँ ईसा मसीहा एक महापुरूष, मुहम्मद ईश्वर प्रेरित, उनके प्रति श्रद्धा-भक्तिका प्रदर्शन अनुचित नहीं। पर इसमें ही क्या कोई ईसाई या मुसलमान हो जायेगा? गलतीके वश या प्रलोभनमें पड़कर अगर किसी हिन्दु दो चारदिन गिरजा या मसजिदकी उपासनामें जा कर ही रहे तो क्या हिन्दु समाजके द्वार उसके लिये चिररूद्ध रहेगा?"

"दरिद्र, निरक्षर, असहाय, उपेक्षित हिन्दुके भीतर हिन्दुधर्मके व्यापक प्रचार-प्रतिष्ठा आवश्यक है। अगर वे हिन्दुत्वकी चेतनामें यथार्थ उद्बुद्ध हो उठे तो, इस समस्याका (धर्मान्तर समस्याका) आत्यन्तिक प्रतिकार संभव है। इस देशमें ईसाई धर्म प्रचारके लिये करोड़ो रूपये खर्च हो रहे है, सहस्र सहस्र धर्मयाजक काम कर रहे हैं, पर हिन्दुधर्म प्रचारके उपयुक्त आयोजन कहाँ? कितने रूपये खर्च हो रहे हैं? कितने प्रचारक काममें व्यास्त हैं।"

आत्मरक्षा ही आधुनिक हिन्दुके सर्वापेक्षा बड़ा धर्म है। गाँव गाँवमें घर घरमें इस महामन्त्र सबको सुनाना होगा। इससे उच्चतर धर्म्म अगर कुछ रहे तो वह है वादमें देंगे। धर्म्मके उच्चतर तत्त्वारहस्य भेद क्या एक बाच्चों सा खेल है?

दुष्ट दुर्वृत्तके आक्रमणसे जो अपने आपको रक्षा नहीं कर सकता वैसे हीन, क्लीव कायर धर्मके दुर्ज्ञेय तन्त्व उदभेद कैसे करेगा?''

मन्तव्य-जातीय आत्मरक्षाका प्रश्न जब उदग्र बनता है तब उसके लिये उपयुक्त प्रस्तुति ही प्रधान कर्त्तव्य है। यह समयके धर्म है।

''मैं क्या करूँगा, वह अभी कोई सही नहीं जानते। लोग सोचते हैं भारत सेवाश्रम संघ ग्रामसमूह निर्माण कर रहे हैं। पर यह तो सिर्फ पृष्ठभूमि बन रही है अगर बूद्धि हो तो वह समझेगा कौन पथपर क्या किया जा रहा है?

''भारतवर्ष फिर जाग्रत होर्गे, पुनः शक्तिशाली बनेंगे, वह मेरी इच्छाशक्तिके प्रभावसे।''

हिन्दुकी विद्या है, बुद्धि है, सामर्थ्य है, किंतु सिर्फ नहीं उसकी संधशक्ति; इस संधशक्तिको जाग्रत करनेसे हिन्दु अजेय वनेंगे।''

''मुसलिमके लिये जैसी मसजिद, ईसाई के लिये गिरजा घर हिन्दुके लिये वैसे हिन्दु मिलन-मन्दिर। मुसलिम लोग जैसे मसजिदमें जाकर नमाज पढ़ते हैं, ईसाई लोग गिरजेमें जाकर प्रार्थना करते है, हिन्दुको भी जातिधर्म निर्विशेषमें प्रति सप्ताहमें अन्ततः एकदिन हिन्दु मिलन-मन्दिरमें सम्मिलित होकर समवेत भावसे वैदिक-सान्ध्योपासना, भजन-कीर्त्तन, शास्त्रादि पाठ करना होगा इसके द्वारा ही खण्ड-विखण्ड विशाल हिन्दु जनतामें स्वधर्म चेतनाके साथ साथ अखण्ड ऐक्यचेतना जाग उठेगी।''

''हिन्दु मिलन-मन्दिर आन्दोलनके दवारा समग्र हिन्दुओंको ऐसे आचार, नियम, निष्ठा की शिक्षा दी जायेगी, जिससे वे अत्यल्प समयके मध्यदेशके सब प्रकारके आन्दोलन ग्रहण कर सकते है एवं सर्वावस्थामें अपने अपने कर्त्तव्य निर्णय कर चलनेमें समर्थ हो जाये।

''जीवनसंग्राममें दुर्वलके विनाश अवश्यम्भावी है। पुरूषत्त्वहीन निश्चेष्ट व्यक्तिके प्रति विधाता भी अतृप्त है। हिन्दुको आज क्लीवता परिहार पूर्वक जीवन-संग्राममें वीर विक्रमके साथ कूदना पड़ेगा। हिन्दुकी नस-नसमें आज चाहिये-दुर्जय वीर्य, हृदय हृदयमें दुर्दम संकल्पके संचार। इसलिये ही मेरे रक्षिदल आन्दोलन।'

—आचार्य स्वामी प्रणवानन्द

ॐ

श्रीश्रीगुरु-वन्दना

भव-सागर-तारण-कारण हे
रवि-नन्दन-बन्धन-खण्डन हे
शरणागत किंकर भीत मने
गुरूदेव दयाकर दीन जने।।१।।

हृदि-कन्दर-तामस-भास्कर हे
तुम्हीं विष्णु प्रजापति शंकर हे।
परब्रह्म परात्पर वेद भणे
गुरदेव दयाकर दीन जने।।२

मन-वारण-शासन-अंकुश हे
नरत्राण तरे हरि चाक्षुष हे।
गुणगान परायण देवगणे
गुरुदेव दया कर दीन जने।।३।।

कुल कुन्डलिनी-घुम-भञ्जक हे
हृदि ग्रन्थि विदारण कारक है
मम मानस चंचल रात्रि दिने
गुरुदेव दयाकर दीन जने।।४।।

रिपुसूदन मङ्गल-नायक हे
सुख-शान्ति-वराभय-दायक हे
त्रय ताप हरे तव नाम गुणे
गुरुदेव दयाकर दीन जने।।५।।

अभिमान-प्रभाव विमर्द्दक हे
गतिहीन जने तुम्ही रक्षक हे
चित्त शंकित वञ्चित भक्तिधने
गुरुदेव दया कर दीन जने।।६।।

तव नाम सदा शुभ-साधक हे
पतिताधम-मानव-पावक हे
महिमा तव गोचर शुद्ध मने
गुरुदेव दयाकर दीन जने।।७

जय सदगुरु ईश्वर-प्रापक हे,
भव-रोग-विकारविनाशक हे।
मन येन रहे तव श्रीचरणे,
गुरुदेव दया कर दीन जने।।८।।

श्री श्रीगुरू-प्रणव-युगाचार्य-प्रशस्तिः

ॐ सत्यम् शिवं सुन्दरं तपः सिद्धविग्रहम्।
योगीश्वरं योगिराजं युगाचार्य नमाम्यहम्।।
व्याघ्राम्बरधरं देवं शूलहस्तं सुभैरवम्।
नमामि त्वां महादेवं दिव्यज्योतिर्विभूषितम्।।

आचार्य प्रणवं देवं आशुतोषं बरप्रदम्।
नमामि सच्चिदानन्दं श्री प्रणवानन्द-विग्रहम्।।
ॐ अहैतुकीं प्रेमसिन्धुं तपस्तेजसा दीप्तिमन्तम्।
महामुक्ति-विधातारं श्रीप्रणवाचार्यं नमामि।।

शिवजी को नमस्कार

नमस्तुभ्यं विरूपाक्ष नमस्ते दिव्यचक्षुषे।
नमः पिनाकहस्ताय वज्रहस्ताय वे नमः।।१।।
नमस्त्रिशूलहस्ताय दण्डपाशासिपाणये।
नमस्त्रैलोक्यनाथाय भूतानां पतये नमः।।२।।
वाणेश्वराय नरकार्णवतारणाय,
ज्ञानप्रदाय करूणामयसागराय।
कर्पूर-कुन्द-धवलेन्दु-जटाधराय,
दारिद्रदुःखदहनाय नमः शिवाय।।३।।
नमः शिवाय शान्ताय कारणत्रयहेतवे।
निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वर।।४।।

शिवजी का ध्यान :-

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशु-मृग-वराभीतिहस्तं प्रसन्नं।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिंवसानं,
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।

शिवाष्टकम्

प्रभुमीशमनीशमशेष गुणं, गुणहीनमहीश गराभरणम्।
रणनिर्जितदुर्जयदैत्यपुरं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरूम्।।१।।

गिरिराजसुतान्वितवामतनुं, तनु-निन्दितराजितकोटिविधुम्।
विधिविंष्णुशिरोधृतपादयुगं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरुम्।।२।।
शशलांछित-रंजितसम्मुकुटं, कटिलम्बितसुन्दरकृत्तिपटम्।।
सुरशैवलिनीकृतपूतजटं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरूम्।।३।।
नयनत्रयभूषितचारूमुखं, मुखपद्मपराजितकोटिविधुम्।
विधुखण्डविमण्डित-भालतटं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरुम्।।४।।
वृपराजनिकेतनमादिगुरूं, गरलाशनमाजिविषाणधरम्।
प्रमथाधिप-सेवकरंजनकं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरूम्।।५।।
मकरध्वज-मत्तमातंगहरं, करिचर्मगनाग-विबोधकरम्।
वरदाभयशूलविषाणधरं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरूम्।।६।।
जगदुद्भवपालननाशकरं, कृपयैकपुनस्त्रयरूपधरम्।
प्रियमानव-साधुजनैकगतिं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरूम्।।७।।
महेश विश्वेश विश्वविभो, पुनर्जन्मदु:खात् परित्राहि शम्भो,
भजतोऽखिलदु:खसमुहहरं, प्रणमामि शिवं शिवकल्पतरूम्।।८।।

श्रीविश्वनाथाष्टकम्

गंगातरंगरमणीयजटाकलापं
गौरीनिरन्तरविभूषितवामभागम्।
नारायणप्रियमनंगमदाप्रहारं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्।।१।।

वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं
वागीशविष्णुसुरसेवितपादपोठम्।
वामेन विग्रहवरेण कलत्रवन्तं। वाराणसी।।२।।

भूताघिपं भुजगभूषणभूषितांगं

व्याघ्राजिनाम्वरधरं जटिलं त्रिनेत्रम्।
पाशांकुशाभयवरप्रदशूलपाणिंम्। वाराणसी।।३।।

शीतांशुशोभितकिरीटविराजमानं
भालेक्षणानलविशोषितपंबाणम्।
नागाधिपारचितभासुरकर्णपूरं। वाराणसी।।४।।

पंचाननं दुरितमत्तमतंगजानां
नागान्तकं दनुजपुंगवपन्नगानाम्।
दावानलं मरणशोकजराटवीनां। वाराणसी।।५।।

तेजोमयं सगुणनिर्गुणमद्वितीय-
मानन्दकन्दमपराजितमप्रमेयम्।
नागात्मकं सकलनिष्कलमात्मरूपं। वाराणसी।।६।।

रागादिदोषरहितं स्वजनानुरागं
वैराग्यशान्तिनिलयं गिरिजासहायम्।
माधुर्यधैर्यसुभगं गरलाभिरामं। वाराणसी।।७।।

आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां
पापे रतिं च सुनिवार्य मनः समाधौ।
आदाय हृत्कमलमध्यगतं परेशं। वाराणसी।।८।।

वाराणसीपुरपतेः स्ववनं शिवस्य
व्यारव्यातमष्टकमिदं पठते मनुष्यः।
विद्यां श्रियं विपुलसौरव्यमनन्तकीर्तिं
सम्प्राप्य देहविलये लभते च मोक्षम्।।९।।

विश्वनाथाष्टकमिदं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्रोति शिवेन सह मोदते।।१०।।

इति श्रीमहर्षव्यासप्रणीतं श्रीविश्वनाथाष्टकं सम्पूर्णम्।

अर्थ :- जिनकी जटाएँ गङ्गाजीकी लहरोंसे सुन्दर प्रतीत होती हैं, जिनका वामभाग सदा पार्वतीजीसे सुशोभित रहता है, जो नारायणके प्रिय और कामदेवके मदका नाश करनेवाले हैं, उन काशीपति-विश्वनाथको भज।।१।। वाणीद्वारा जिनका वर्णन नहीं हो सकता, जिनके अनेक गुण और अनेक स्वरूप हैं, ब्रह्मा, विष्णु और अन्य देवता जिनकी चरणपादुकाका सेवन करते है, जो अपने सुन्दर वामाङ्कके द्वारा ही सपत्नीक हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज।।२।। जो भूतोंके अधिपति हैं, जिनका शरीर सर्परूपी गहनोंसे विभूषित है, जो बाधको खालका वस्त्र पहनते हैं, जिनके हाथोंमें पाश, अंकुश, अभय, वर और शूल हैं, उन जटाधारी त्रिनेत्र काशीपति विश्बनाथको भज।।३।। जो चन्द्रमाद्वारा प्रकाशित किरीटसे शोभित हैं, जिन्होंने अपने भालस्थ नेत्रकी अग्निसे कामदेवको दग्ध कर दिया, जिनके कानोमें बड़े-बेड़े साँपोंक कुण्डल चमक रहे हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज।।४।। जो पापरूपी मतवाले हाथियोंके मारनेवाले सिंह हैं, दैत्यसमुहरूपी साँपोंका नाश करनेवाले गरुड़ हैं तथा जो मरण, शोक और बुढ़ापारूपी भीषण वनको जलानेवाले दावानल हैं, ऐसे काशीपति विश्वनाथको भज।।५।। जो तेजपूर्ण, सगुण, निर्गुण, अद्वितीय, आनन्दकन्द, अपराजित और अनुलनीय हैं, जो अपने शरीरपर साँपोंको धारण करते हैं, जिनका रूप ह्रास-वृद्धिरहित है, ऐसे आत्मस्वरुप काशीपति विश्बनाथको भज।।६।। जो रागादि दोषोंसे रहित हैं, अपने भक्तोंपर कृपा रखते हैं, वैराग्य और शान्तिके स्थान हैं, पार्वतीजी सदा जिनके साथ रहती हैं, जो धीरता और मधुर स्वभावसे सुन्दर जान पड़ते हैं तथा जो कण्ठमें गहलके चिह्नसे सुरोभित हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज।।७।। सब आशाओंको छोड़कर, दूसरोकी निन्दा त्यागकर और पाप-कर्मसे अनुराग हटाकर, चित्तको समाधिमें लगाकर, हृदयकमलमें प्रकाशमान परमेश्वर काशीपति विश्वनाथको भज।।८।। जो मनुष्य काशीपति शिवके इस आठ श्लोकोंके स्तवनका पाठ करता है, वह विद्या, धन, प्रचुर सौख्य और अनन्त कीर्ति प्राप्तकर देहावसान होनेपर मोक्ष भी प्राप्त कर लेता है।।९।। जो शिवके समीप इस विश्वनाथाष्टकका पाठ करता है, वह शिवलोक प्राप्त करता और शिवके पाथ आनन्दित होता है।।१०।।

भारत सेवाश्रम संघ की हिन्दी किताबें

युगाचार्य जीवन चहित	३०.००
जीवन की झाँकिया	२५.००
ॐ संघवाणी	२५.००
जीवन साधना का पथपर	२५.००
वह्मचर्यम	६.००
हिन्दुत्वमं	६.००
गगां सागर की माहात्म्य	४.००
गया महात्म्य	५.००
प्रणवानन्द उपदेश	४.००
कुम्ममेला माहात्म्य	५.००
ॐ श्रीश्री जगदगुरु	४.००
महाभारत की वालीपयोगी कहानियाँ	३०.००
पाथेय	१०.००
प्रणबानन्दजी की जीवनी तथा उनके संघ की गतिविधियाँ	५.००